राजमुकुट

संपादक
सर्वप्रथम देव-पुरस्कार-विजेता
श्रीदुलारेलाल
(सुधा-संपादक)

गंगा-पुस्तकमाला का १४६वाँ पुष्प

राजमुकुट

[सचित्र, ऐतिहासिक नाटक]

लेखक
पं० गोविंदवल्लभ पंत
(वरमाला, संध्या-प्रदीप, प्रतिमा, मदारी, अंगूर की बेटी, जूनिया, अंतःपुर का छिद्र, तारिका आदि के रचयिता)

मिलने का पता—
गंगा-ग्रंथागार
३६, लाटूश

सजिल्द १॥।)] सं०

प्रकाशक
श्रीदुलारेलाल
अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
लखनऊ

प्रथमावृत्ति १९३५
द्वितीयावृत्ति १९३६
तृतीयावृत्ति १९३६
चतुर्थावृत्ति १९३७
पंचमावृत्ति १९३७
षष्ठावृत्ति १९३७
सप्तमावृत्ति १९३८
अष्टमावृत्ति १९३९
नवमावृत्ति १९४१
दशमावृत्ति १९४२
एकदशावृत्ति १९४५

मुद्रक
श्रीदुलारेलाल
अध्यक्ष गंगा-फ़ाइनआर्ट-प्रेस
लखनऊ

भूमिका

हिंदी-साहित्य के प्रमुख नाटककारों में पं० गोविंदवल्लभ पंत का स्थान विशेष ऊँचा है। उनकी कृतियों ने यह सिद्ध कर दिया है कि साहित्यिक नाटक भी स्टेज-अभिनय की दृष्टि से सफल हो सकते हैं। 'वरमाला' नाटक-साहित्य की, वास्तव में, वरमाला ही सिद्ध हुई है। पंतजी की मार्मिक कल्पना और प्रखर प्रतिभा का नया रूप 'राजमुकुट' सामने है।

कहना न होगा कि ऐतिहासिक नाटकों की रचना में पंतजी ने एक नवीन युग का निर्माण किया है। उनकी शैली में ओज है, उनकी भाषा में प्रवाह है, और उनकी कृति पर अनुभवशीलता की छाप है। 'राज-मुकुट' राजपूताने की एक प्राचीन गौरव-गाथा है। वीरांगना पन्ना का नाम किसने न सुना होगा! वही धाय पन्ना, जिसने स्वामिभक्ति की वेदी पर अपने दुधमुँहे बच्चे का बलिदान देकर मेवाड़ की वंश-बेलि को नष्ट होने से बचाया! वही क्षत्राणी पन्ना, जिसका अनुपम त्याग, जिसकी अपूर्व देश-भक्ति राजस्थान की महिलाओं के आदर्श की जीती-जागती कहानी है! 'राजमुकुट' उसी की एक उज्ज्वल स्मृति है।

ऐतिहासिक सत्य को सर्व-सुलभ साहित्य का रूप देने में कल्पना का आश्रय अवश्य लिया जाता है। पंतजी के कुछ पात्र कल्पित हैं, किंतु यह कल्पना भी इतनी समयानुकूल और उपयुक्त है कि इससे उस सत्य की पूर्ति होती है, जो घटना-काल की दृष्टि से विस्मृति और अनुसंधान से परे है।

'राजमुकुट' की विशेषता है उसका मनोवैज्ञानिक विकास। दृश्यावली और पात्र-योजना का घटनाओं से अच्छा सामंजस्य पाया जाता है। नाटक को अभिनय-योग्य बनाने के लिये उपर्युक्त बातों की बड़ी आव-श्यकता होती है। पंतजी का दृष्टिकोण उनकी कृति की सफलता का प्रथम कारण है। 'राजमुकुट' में विषय-निर्वाह और कथानक का विकास सराह-

नीय है। हिंदी के नाटकों में यह पहला अवसर है, जब किसी नाटककार ने रसावेश को स्थायी रखते हुए कथानक की मर्यादा को नष्ट नहीं होने दिया है।

देश-भक्ति, राजभक्ति और स्वामिभक्ति के अनेकों उदाहरणों में से 'राजमुकुट' के आदर्श का उदाहरण मिलना कठिन है। नाटक का आधार पन्ना (एक स्त्री) है। विरोधी पात्र शीतलसेनी भी एक स्त्री है। दोनो का चरित्र-चित्रण बड़े मार्के का और रोचक है। स्त्रियों की शक्ति कितनी प्रबल और उनकी महत्ता कितनी असीम होती है, यह इस नाटक में अच्छी तरह दिखाया गया है। स्वदेश के लिये अपने प्राणों से भी प्यारे पुत्र को घातक की तलवार के आगे डाल देना एक माता की स्वामिभक्ति का आदर्श है। वीरांगना पन्ना का चरित्र भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में भी सर्वोच्च और व्यापक दिखाई देता है। 'राजमुकुट' का आधार है पन्ना और पन्ना का पात्र-चित्रण नाटककार की कुशलता और प्रतिभा का परिचायक है।

'राजमुकुट' पंतजी की एक सुंदर कृति है। हमें आशा है, हिंदी-जगत् उसका आदर करेगा। तथास्तु।

कवि-कुटीर
लखनऊ

संपादक

धन्यवाद

हिंदी-संसार ने इस नाटक का जितना आदर किया, उतना शायद ही किसी और नाटक का किया हो। अनेक शिक्षा-संस्थाओं ने इसे कोर्स में रक्खा। हम सबके कृतज्ञ हैं। आशा है, सभी प्रांतों के शिक्षा-विभाग इसे अपने यहाँ इंट्रेंस में रक्खेंगे, जिसके लिये यह अत्यंत उपयुक्त है।

संपादक

मंगलाचरण-वंदना

शंकरा—चार ताल

मंगलमय ! मंगल कर।
सर्वमंगला के वर ॥ मं० ॥
पावन कर, अघहर, हर ॥ मं० ॥
त्रिनयन, त्रिभुवनाधार,
त्रिपुरारी, त्रिशूल-कर ॥ मं० ॥
बिष-धर, विषधर-धर, शशधर-शशि-धर,
सुरसरि-धर, पिनाक-धर, डमरू-धर ॥ मं० ॥
अमल, धवल, अजर, अमर,
सदय, सरल, प्रलयंकर,
जयति-जयति-जय ! शंकर !! मं० ॥

[illegible]

१. विक्रमसिंह— मेवाड़ के महाराना

२. उदयसिंह— विक्रमसिंह के भाई

३. बनवीर— शीतलसेनी के पुत्र

४. कर्मचंद— बूढ़े प्रधान सरदार

५. जयसिंह— कर्मचंद के पुत्र

६. रणजीत— एक लोभी सरदार

७. बहादुरसिंह— पन्ना का पति, एक हाथ-कटा सिपाही, बाद को तांत्रिक

८. चंदन— पन्ना का बेटा

९. ईशकरण— डूँगरपुर के राजा

१०. आशाशाह— कमलमीर के राजा

११. चंदावत— एक सरदार

१२. ईशकर्ण के सेनापति

१३. बारी

१४. योगी

प्रजागण, सरदारगण, राजपुरोहित, वधिक, प्रहरी और तांत्रिकगण

* * *

१५. पन्ना— उदयसिंह की धाय

१६. शीतलसेनी— बनवीर की माता

आशाशाह की माता, एक दुःखिनी और नर्तकियाँ

प्रथमाङ्क

राजमुकुट

प्रथम दृश्य

चित्तौड़ के महाराना विक्रम का विलास-कक्ष

(आधार पर आसव के पात्र हैं। उपस्थित—मुँह लटकाए, बाएँ गाल पर हथेली रक्खे अकेले विक्रम।)

विक्रम—मनुष्य का जीवन बहुत ही छोटी वस्तु है। [उत्तेजित होकर] मेरे सुख की इच्छाएँ इसी जन्म में क्यों न पूरी हों? मैं अपने मन में क्यों चिंता का मैल जमने दूँ?

[रणजीत का प्रवेश।]

रणजीत—इसे धो डालो, महाराज!

[आसव-पात्र उठाकर विक्रम को देता है।]

विक्रम—यह आसव का पात्र है, लाओ रणजीत, तुम मेरे सबसे अधिक हितैषी हो। यह जल से अधिक उपयोगी होगा। जीवन की क्षणिकते! तेरा विचार दूर हो। संसार के सुख-भोग! मैं किसी भाव तुझे मोल लूँगा।

[आसव-पात्र लेकर पीता है।]

दुःखिनी—[नेपथ्य से] रक्षा! रक्षा!

विक्रम—अब कैसी रक्षा? अब विक्रम ने सुधा का पात्र

रिक्त कर दिया है। अब कुछ भी न हो सकेगा। तुम जो भी हो, लौट जाओ। फिर कभी यदि मुझे होश में पा सको, तो आना; नहीं तो जाओ, तुम भी उसी झुंड में प्रवेश करो, जो विक्रम से पीड़ित होकर उसके सिंहासन को उलटना चाहता है।

रणजीत—[तलवार खींच [illegible]] सावधान! तुम यदि देवराज इंद्र भी हो, तो महाराना विक्रम का बाल बाँका करने से पहले तुमको रणजीत से सामना करना होगा।

विक्रम—रणजीत! तुम हो? मेरे सहायक!

रणजीत—हाँ, सेवक रणजीत ही है।

विक्रम—तो कुछ भी भय नहीं है?

रणजीत—मेरे प्राण रहते कुछ भी नहीं।

विक्रम—लाओ, लाओ, एक बार फिर इस प्याले को भरो कि यह फिर रिक्त हो सके, क्योंकि भय कुछ भी नहीं है।

[रणजीत फिर आसव-पात्र भरकर विक्रम को देता है। विक्रम फिर पीता है। दुःखिनी अपने दो बच्चों के साथ आती है।]

दुःखिनी—रक्षा! रक्षा! [भूमि पर शीश झुकाती है।]

विक्रम—कौन?

दुःखिनी—दुःख से पीड़ित, विपत्ति की मारी।

विक्रम—अभागिनी! मेरे गीत के लिये क्यों विवादी स्वर लेकर आई?

दुःखिनी—यह क्या सुनती हूँ चित्तौड़-कुल-भूषण! इस वंश ने सदैव दीन और आर्त की सुनी है।

विक्रम—जा, जा, मैं कुछ भी न सुनूँगा। इस वंश में अब तेरी चैन की वंशी नहीं बज सकती। यदि तू चिल्लावेगी, तो मैं अपने उत्सव के गीतों को अंतरित कर तार ग्राम में ले चलूँगा। उसमें तेरा क्रंदन डूब जायगा।

दुःखिनी—आप यह क्या कह रहे हैं, महाराना! देश के प्रत्येक सिरे में अकाल छाया हुआ है, प्रजा भूख से तड़प-तड़प-कर मर रही है।

विक्रम—उसे मरने दो। क्या मैंने उसकी फ़सल काटी है? देश में अकाल पड़ा है, तो क्या बादलों का राजा मैं हूँ?

दुःखिनी—मैं भीख माँगकर अपने बाल-बच्चों का पालन कर रही थी। आपके कर्मचारियों ने कोई बर्तन भी नहीं छोड़ा। मैं क्या करूँ?

रणजीत—किसी अँधेरे देव-मंदिर में अपने फूटे भाग्य के लिये दीपक जला। जा, निकल यहाँ से। [निकल जाने का संकेत करता है।]

दुःखिनी—तुम राजा के झूठे मित्र हो, तुम्हीं ने इन्हें कुमार्ग दिखाया है। विक्रम राजतिलक के समय ऐसे नहीं थे। मैं महाराना के न्याय की भिखारिन हूँ। [अंचल पसारकर घुटने टेकती है।]

चारों प्रजा—अन्याय का दमन करो, हिंदू-सूर्य ! न्याय करो।

रणजीत—कैसा न्याय, क्या यह न्यायालय है ?

प्रजा १—चुप रहो रणजीत ! तुम्हारे झूठे शब्द हमें शांत नहीं कर सकते।

प्रजा २—तुम न्यायालय की बात कहते हो ? बताओ, बताओ, कहाँ है वह ?

विक्रम—हमारा मन उस मधुर गीत के स्वर्ग में विचर रहा था। तुमने यह किस नरक का द्वार खोल दिया ? चांडालो ! निकालो यहाँ से।

रणजीत—जाओ, जाओ, यह समय महाराज के थके मन को शांति देने का है। तुम्हारी बकवाद के लिये नहीं है। [उन्हें धक्का देकर निकालना चाहता है।]

प्रजा ३—सावधान ! रणजीत, तुम बीच में न पड़ो।

विक्रम—कोई है ? प्रहरी !

प्रजा ४—प्रहरी हमारे आने में बाधक हुआ, हम उसे आहत कर आगे बढ़े हैं।

विक्रम—[तलवार खींचकर सक्रोध] और, क्या तुम अब मेरा वध करने आए हो ? चांडलो ! मैं तुम्हें जीता न छोड़ूँगा।

प्रजा १—कुछ भी चिंता नहीं।

प्रजा २—हम यही चाहते हैं, जीने में कोई भी सुख नहीं है। [महाराना के आगे सिर झुका देता है।]

[विक्रम उसे मारने को तलवार उठाते हैं, सहसा चार सरदारों के साथ कर्मचंद आकर राजा का हाथ पकड़ते हैं ।]

कर्मचंद—सावधान महाराज ! निर्धन, निरपराध और निहत्थी प्रजा के ऊपर यह तलवार ! इसे निर्दोष रक्त में सान-कर फिर कहाँ रक्खोगे ?

विक्रम—कौन ! प्रधान मंत्री ? यह राजसभा नहीं है, मेरा विलास-भवन है । यहाँ मेरी इच्छा के ऊपर किसी का राज नहीं । मैं इन वधिकों को निस्संदेह प्राण-दंड दूँगा ।

कर्मचंद—तो अपने राजसिंहासन को भी अचल न समझो, इसके नीचे इन्हीं के कंधे हैं । किंतु सावधान ! यदि आप अपना कर्तव्य भूलते हैं, तो मैं न भूलूँगा । मैं इनकी रक्षा करूँगा । मैं इन्हें न मरने दूँगा ।

विक्रम—जो बाधा देगा, वही मेरी तलवार का प्रथम लक्ष्य होगा ।

कर्मचंद—ऐसा ही सही ; लो, मारो । यदि तुम्हारी भुजाओं में शक्ति और इस तलवार में तीक्ष्णता है, तो मैं भी उस झुके सिर को अधिक झुकाता हूँ, जिसका प्रत्येक बाल मेवाड़ की सेवा में पक चुका है । [सिर झुकाते हैं ।]

विक्रम—मैं इसके लिये भी प्रस्तुत हूँ । [तलवार उठाता है ।]

[तलवार खींचे जयसिंह का प्रवेश, और पिता की सहायता के लिये विक्रम के ऊपर वार करना ।]

जयसिंह—सावधान !

[तलवार खींचे बनवीर का आकर जयसिंह के वार को अपनी तलवार पर ले लेना ।]

बनवीर—ख़बरदार ! [कर्मचंद जयसिंह के हाथ की तलवार नीची करा देता है ।] विक्रम मेरे मित्र और भाई हैं। उनके ऊपर चोट करने से पहले मेरी तलवार की धार भी देखो।

कर्मचंद—तुम क्या करना चाहते थे, पुत्र !

जयसिंह—पिता के प्रति अपने कर्तव्य-पालन के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं।

कर्मचंद—नहीं, नहीं, विक्रम को मैंने गोद खिलाया है। वह मुझे तुम्हारे ही समान प्रिय है। उसने तलवार उठाई, तो क्या हुआ ? वह मेरा वध न कर सकता। इसे भूल जाओ।

जयसिंह—भूल जाऊँ ? आप किस-किससे भूल जाने को कहेंगे ? कौन-कौन भूल सकेगा ? यह देखिए, प्रजा की दुर्दशा !—[प्रजा को हाथ से दिखाता है ।]

सब प्रजा—दुहाई है, सरदारों की दुहाई है।

जयसिंह—इनकी दशा देखकर आप मेवाड़ के भविष्य की कैसी कल्पना करते हैं ? प्रजा कब तक शांत रहेगी ?

सब प्रजा—रक्षा करो, रक्षा करो।

जयसिंह—सरदारगण ! जब प्रधान सरदार के लिये राजा के हृदय में यह आदर-भाव रह गया है, तो तुम्हारे लिये कौन-

सा स्थान होगा ? कहो, क्या चाहते हो ? मेवाड़ के सिंहासन पर न्याय-रहित राजा रहे ?

चारो सरदार—"नहीं, वह शून्य ही अच्छा है।

जयसिंह—प्रजागण ! तुम क्या चाहते हो ?

चारो प्रजा—हमारे संकट दूर हों।

जयसिंह—विक्रम से न होंगे।

प्रजा १—तो कोई और उपाय ?

सरदार १—यही कि विक्रम को सिंहासन से उतार दिया जाय।

जयसिंह—यही एक उपाय है; चलो, इसी पर विचार करेंगे। [जाना चाहता है।]

कर्मचंद—पुत्र, यह क्या ?

जयसिंह—आपके अपमान का बदला। चलें, मेवाड़ का कल्याण चाहनेवाले चलें। मैं उन्हें सुख की राह दिखाऊँगा।

[जयसिंह के पीछे चारो सरदार, चारो प्रजा और कर्मचंद का जाना।]

वनवीर—मैं भी चलूँगा, कदाचित् तुम मेरे भाई विक्रम की ओर विषम पग बढ़ाना चाहते हो। [जाना।]

विक्रम—सब चले गए, रणजीत ! तुम नहीं गए ?

रणजीत—रणजीत क्यों जायगा, महाराज ! क्या वह आपका शत्रु है ?

विक्रम—केवल एक मित्र से क्या होगा, रणधीर ! तुम भी जाओ, मैं सुरादेवी के साथ इस कक्ष में अकेला ही रहना चाहता हूँ। [आसन पर बैठना और सुरा-पान करना।]

रणधीर—[मस्तक पर हाथ रखकर कुछ विचारने के बाद।] आपकी यह इच्छा पूर्ण हो, मुझे विद्रोहियों का भेद लेने के लिये जाना चाहिए। जाता हूँ, महाराना ! [जाना।]

विक्रम—जाओ, तुम भी जाओ। विक्रम को किसी का भय नहीं। सरदार विरोधी हो गए, प्रजा विद्रोही हो गई, क्या कोई और भी शेष है ?

[शीतलसेनी का आना।]

शीतलसेनी—हाँ।

विक्रम—कौन ?

शीतलसेनी—बनवीर की माता, रानी शीतलसेनी।

विक्रम—रानी शीतलसेनी ? हा, हा, हा, हा !

शीतलसेनी—यह कैसा व्यंग्य हास्य है, महाराज ! क्या मैं आपके चचा पृथ्वीराज की स्त्री नहीं हूँ ?

विक्रम—किसलिये आने का कष्ट किया ?

शीतलसेनी—भिक्षा के लिये नहीं, अपना अधिकार प्राप्त करने आई हूँ।

विक्रम—कौन-सा ?

शीतलसेनी—तुम्हें ज्ञात है, महाराना संग्रामसिंह मेरे और मेरे बेटे वनवीर के लिये जो मासिक वृत्ति नियत कर गए थे,

वह हमें कब से नहीं मिली, तथा मैंने कितनी बार उसके लिये व्यर्थ प्रार्थना नहीं की ?

विक्रम—वृत्ति नहीं मिलती, तो क्या तुम भूखी मर रही हो ?

शीतलसेनी—भूखे मरने की बात छोड़ो, विक्रम ! होश में आओ, क्या मेरी माँग न्याय-संगत नहीं है ?

विक्रम—होगी, पर इस समय जाओ। राजकोष रिक्त है, फिर कभी देखा जायगा।

शीतलसेनी—कभी नहीं, बिना अपना हिस्सा प्राप्त किए यहाँ से न टलूँगी। कब तक तुम्हारा अन्याय सहन होगा ?

विक्रम—मैंने कौन-सा अन्याय किया ? [आसन से उठना।]

शीतलसेनी—हमारे धन से अपने विलास के सामान जुटाते हो !

विक्रम—तू किसके सामने बोल रही है ?

शीतलसेनी—एक क्रूर के समीप, एक डाकू के सामने।

विक्रम—सावधान ! अपने वंश को याद कर। नीच दासी ! तेरा ऐसा साहस ?

शीतलसेनी—मैं तेरे चाचा की स्त्री मा के समान हूँ, नीच दासी ! इन अपमान-जनक शब्दों को याद रखना, विक्रम ! तूने नागिन की पूँछ दबाई है।

विक्रम—मैं उसका सिर भी कुचल दूँगा।

शीतलसेनी—मैं उससे पहले ही तेरा मुकुट चूर्ण कर दूँगी, तेरा सिंहासन उलट दूँगी, तुझे समूल नष्ट कर दूँगी।

द्वितीय दृश्य

बनवीर का महल

[शीतलसेनी गाती हुई आती है।]

काफ़ी—झपताल

अपमान की आग,

मेरे मन में जाग री, जाग।

(अंतरा)

हो भस्म उसमें रिपु-शक्ति सारी,

हे भाव भय के, भाग रे भाग,

जागे मेरे भाग।

शीतलसेनी—यह राजमाता बनने की इच्छा न-जाने कब से बलवती होती जा रही है। समय इसके अनुकूल ही चल रहा है। विक्रम ने मेरा अपमान किया, वही मेरे मान का कारण होगा। सरदारों और प्रजा का आग्रह है, विक्रम के स्थान में बनवीर मेवाड़ के महाराना हों। मैं भी राजमाता बनूँगी।

[रणजीत का प्रवेश।]

रणजीत—और मैं?

शीतलसेनी—तुमने सुन लिया? बड़े चतुर हो। हाँ, हाँ, तुम भी प्रधान मंत्री बनोगे। तुम उसके लिये प्रयत्न कर रहे हो?

रणजीत—हाँ, बराबर सफलता के साथ। विक्रम के पीछे मैंने ही प्रजा में राजद्रोह की आग फैलाई है। उसके सामने मैं उसका मित्र हूँ। प्रजा का दुख दूर करने के लिये उसने जब चिंता की, तभी मैंने उसके हाथों में सुरा से परिपूर्ण पात्र रख दिया।

शीतलसेनी—तुम्हारी सहायता से निस्संदेह मेरा काम पूरा होगा।

रणजीत—पर मुझे भय है, तुम उस समय कहीं मुझे ही न भूल जाओ।

शीतलसेनी—चिंता न करो, रणजीत! मैंने तुम्हारे आग्रह के अनुसार यह लिखत कर दी है। [लिखत देती है।]

रणजीत—पढ़ूँ तो। [लिखत लेकर पढ़ता है।] "यदि सरदार रणजीत रानी शीतलसेनी को राजमाता बनने में सहायता दें, तो उन्हें मेवाड़ाधिपति बनवीर का प्रधान मंत्री-पद प्राप्त होगा। हस्ताक्षर—शीतलसेनी।" [लिखत सावधानी से मोड़कर अंदर की जेब में रखता है।]

शीतलसेनी—[चिंतित होकर।] किंतु जिसकी आशंका ही नहीं थी, ऐसा एक विघ्न उपस्थित हो गया है।

रणजीत—वह कौन-सा?

शीतलसेनी—तुम्हारी नसों में उसका बदला लेने को रक्त है ?

बनवीर—क्यों नहीं ? [तलवार निकालता है ।]

शीतलसेनी—तुम पर माता का कुछ भी ऋण न रहे। जाओ, इसी प्रकार विक्रम की खोज करो। उसी ने तुम्हारी माता को वेश्या कहा है। उस अभिमान-भरे मस्तक को धड़ से अलग करो।

बनवीर—[तलवार फेंककर] चुप रहो मा ! विक्रम भी कोई पराया है ? वह तो मेरे ही समान तुम्हारा पुत्र है। पुत्र कभी माता का अपमान नहीं करता, माता सदैव उसे क्षमा करती है।

शीतलसेनी—क्षमा ? तुम क्षमा करने को कहते हो, बनवीर ! हा ! भगवान् ! मैं समझ लूँगी , मैं वंध्या हूँ। मैंने गोद में पुत्र नहीं, पिंजरे में पक्षी का पालन किया।

बनवीर—नहीं मा ! इस चिनगारी पर पवन नहीं, पानी डालो। चलो, विक्रम तुम्हारे चरणों पर गिरकर तुमसे क्षमा माँग लेगा। यह तलवार मेवाड़ के शत्रुओं के लिये हो। [तलवार उठाकर रख लेता है ।]

शीतलसेनी—इस समय विक्रम से बढ़कर और कौन मेवाड़ का शत्रु है ? तुम माता के निरादर को सह सकते हो, तुम्हें प्रजा की दीन दशा देखकर भी चिंता न हुई ?

[जयसिंह के साथ चार सरदारों का आना ।]

जयसिंह—तुमने हमारे प्रस्ताव पर विचार किया, बनवीर !

तुम विक्रम के सिंहासन पर बैठने को प्रस्तुत हो या नहीं? हम इसी समय तुम्हारा उत्तर चाहते हैं।

बनवीर—राजमुकुट-हीन होकर विक्रम कहाँ रहेंगे?

जयसिंह—दुर्ग के अँधेरे कारागार में। जब तक जिएगा, अपने पाप का प्रायश्चित्त करेगा।

बनवीर—क्या तुम्हारे पिताजी की भी यही इच्छा है?

[कर्मचंद का प्रवेश।]

कर्मचंद—हाँ बेटा! इसी मेवाड़ की सेवा में मेरा जन्म बीता है, मैं इसकी अहित-चिंता नहीं कर सकता।

बनवीर—तो विक्रम के छोटे भाई उदय का राजतिलक कीजिए

कर्मचंद—नहीं, अभी वह केवल बालक है। उसके बड़े होने तक तुम्हीं मेवाड़ पर राज्य करो।

बनवीर—पर विक्रम को राज-सिंहासन खोकर कारागार में रहने की क्या आवश्यकता है?

कर्मचंद—कारागार के कष्टों से कदाचित् वह फिर सुधरने की प्रतिज्ञा करे। सबके कल्याण के लिये राज्य के अधिकांश शुभचिंतकों ने यही विचारा है। अच्छी बात है, तुम्हें हमारा प्रस्ताव स्वीकृत है। हम जाकर तुम्हारे राजतिलक की घोषणा करेंगे। [जाना चाहते हैं।]

बनवीर—किंतु

शीतलसेनी—[बाधा देकर] चुप रहो पुत्र! मेवाड़ की भलाई में अब कोई किंतु नहीं।

[कर्मचंद, जयसिंह आदि सरदार जाते हैं ।]

बनवीर—बड़ी विकट समस्या है । मोहनी से भरे हुए सुवर्ण के राजमुकुट !

शीतलसेनी—[एकाएक] हाँ, अभी आती हूँ ।

[छिपे हुए रणजीत को संकेत देकर चली जाती है । रणजीत का छद्मवेश में कटार लेकर प्रवेश और तत्क्षण बनवीर के पीछे से उसके ऊपर झपटना । ज्यों ही बनवीर को नीचे गिराकर कटार भोंकना चाहता है, त्यों ही शीतलसेनी आकर कटार छीन लेती है, और रणजीत को भागने का संकेत करती है । रणजीत भाग जाता है ।]

बनवीर—कौन ?

शीतलसेनी—नरपिशाच ! घातक ! भागा, भाग गया । पकड़ो-पकड़ो । [घातक के पीछे भागती है, पर बनवीर उसका हाथ खींच लेता है ।]

बनवीर—तुमने रक्षा की, मा ! भागने दो उसे ।

शीतलसेनी—महान् आश्चर्य है, तुम्हारी हत्या करने यह कौन आया ? [कटार पर दृष्टि करती है ।]

बनवीर—मेरा कोई भी शत्रु नहीं है ।

[रणजीत का छद्मवेश त्यागकर प्रवेश ।]

रणजीत—विक्रम को छोड़कर । किस ध्यान में हो बनवीर !

जब से विक्रम ने सुना है, सरदारगण तुम्हें उनके सिंहासन पर बिठाना चाहते हैं, वह तुम्हारा ही अस्तित्व मिटाने की चिंता में हैं।

शीतलसेनी—निसंदेह, यह घातक उसी ने भेजा है।

बनवीर—यह क्या देखता हूँ भगवान् ! मैंने उस दिन राजसभा में उसके प्राण बचाए थे।

शीतलसेनी—ये सब विचार छोड़ दो, संसार ऐसा ही है। उठो, मेवाड़ के सिंहासन के लिये प्रस्तुत होओ। इस पथ में जो बाधा हो, उसी का अंत करो।

बनवीर—ऐसा ही करूँगा, मा ! उसने तुम्हारा अपमान किया, वृद्ध पिता-तुल्य सरदार कर्मचंदजी का तिरस्कार किया, प्रजा को असंख्य कष्ट दिए, आज वही मेरे प्राणों का भूखा है। तुम्हारा बदला, सरदारों का अनुरोध, प्रजा का हाहाकार और अपने प्राणों का मोह—मैं इन सबके लिये मेवाड़ के सिंहासन पर बैठूँगा। बताओ मा ! राजमुकुट कहाँ है ?

[बनवीर, उसके पीछे शीतलसेनी और रणजीत का प्रस्थान ।]

परदा उठता है।

तृतीय दृश्य

उपवन में चित्तौड़ेश्वरी का मंदिर

[पन्ना हाथ जोड़कर प्रार्थना कर रही है ।]

पीलू—तीन ताल

पन्ना—तेरी प्रतिमा मन-मंदिर में,
तेरा स्तुति-गीत अधर में है ;
तेरा ही ध्यान विचारों में,
तेरी माला युग कर में है ।

[बाईं ओर उदय का प्रवेश ।]

उदय—तू आदि देव परमेश्वर है,

[दाहनी ओर चंदन का प्रवेश ।]

चंदन—तू अंतक रुद्र भयंकर है ।

पन्ना—तू तारों में, तू पुष्पों में,
तू प्रतिबिंबित सागर में है ।

तीनो—तेरा ही ध्यान विचारों में,
तेरी माला युग कर में है ।

[उदय-चंदन का जाना ।]

पन्ना—तेरी प्रतिमा मन-मंदिर में,
तेरा स्तुति-गीत अधर में है।

[उदय का प्रवेश।]

उदय—तेरी महिमा मग-मग पर है,

[चंदन का प्रवेश।]

चंदन—तेरी गरिमा पग-पग पर है।

पन्ना—तू ही रजनी में लोप हुआ,
तू प्रकट दिवाकर-कर में है।

तीनों—तेरा ही ध्यान विचारों में,
तेरी माला युग कर में है।

पन्ना—तू तेज और तू ही तम है,
तू विषम और तू ही सम है।

उदय—तू रास-चक्र में कहीं श्याम,

चंदन—तू काली कहीं समर में है।

उदय और चंदन—तेरा ही ध्यान विचारों में,
तेरी माला युग कर में है।

तीनों—तेरी प्रतिमा मन-मंदिर में,
तेरा स्तुति-गीत अधर में है।
तेरा ही ध्यान विचारों में,
तेरी माला युग कर में है।

[एक ओर उदय, दूसरी ओर चंदन को लेकर पन्ना आगे बढ़ता है।]

पन्ना—तुम एक पेड़ में फैलनेवाली दो शाखाएँ हो, एक शाखा में फूलनेवाले दो फूल हो, एक फूल में फलनेवाले दो फल हो।

उदय—इन दोनों की जड़ में तुम एक ही हो मा!

पन्ना—मेरी एक ही इच्छा है, मेवाड़ का मंगल हो। मैंने इसके लिये मा चित्तौड़ेश्वरी के मंदिर में बार-बार विनती की है। संग्रामसिंह का वंश गौरव को प्राप्त हो, मेवाड़ की प्रजा सुखी रहे।

चंदन—महाराना संग्रामसिंह, यह उदय के पिता का नाम है। तुम बार-बार यह नाम सुनाती हो, तुमने एक बार भी मेरे पिता का वर्णन भली भाँति नहीं किया। इतना तुमने अवश्य ही कहा है कि मेरे पिता संग्रामसिंह की सेना में सैनिक थे।

पन्ना—हाँ, इसके बाद कनवाहा के युद्ध में अपना दाहना हाथ कट चुका सेना से अलग होगए। जब गुजरात के सुलतान ने चित्तौड़ का ध्वंस किया, तो उसने हमारे जीवन के अतिरिक्त हमारे लिये कुछ भी न छोड़ा। तब तुम बहुत ही छोटे थे।

चंदन—यह सब मैं जानता हूँ, इसके अतिरिक्त भी कुछ जानना चाहता हूँ। मेरे पिता कहाँ हैं, मा! जब मैं छोटा था, तो तुम कहती थीं, धन कमाने के लिये विदेश गए हैं। वह कब लौटेंगे?

पन्ना—मैं क्या उत्तर दूँ पुत्र!

उदय—अब तुम कभी नहीं कहतीं कि वह विदेश गए हैं। क्या उन्होंने तुमसे जाते समय कुछ भी नहीं कहा?

पन्ना—नहीं, वह स्वामी के विछोह की रात, इतने दिनों का अंतर होने पर, अब भी भयंकर ज्ञात होती है।

उदय—वह क्यों चल दिए होंगे?

पन्ना—दुख और दरिद्रता से विकल होने के सिवा और क्या हो सकता है?

उदय—तुम्हारी और चंदन, दोनो की ममता को बिलकुल भूलकर?

पन्ना—हाँ बेटा, हमारी ही चिंता नहीं, वल्कि उन्होंने उस समय ईश्वर का विश्वास भी छोड़ दिया था। [गले से एक तावीज़ निकालकर] यह तावीज़ मैंने हर घड़ी उनके गले में देखा था। जिस रात को वह चुपचाप घर छोड़कर चल दिए, उसके प्रभात में यह मुझे द्वार के पास पड़ी मिली। उनके लौट आने की आशा में मैं आज तक इसे पहने रही। अब इसे तुम्हीं पहना करो चंदन! यह तुम्हारी रक्षा करे। [चंदन के गले में वह तावीज़ पहना देती है।]

चंदन—मैं भी इसकी रक्षा करूँगा।

उदय—तुम फिर हमारे यहाँ कैसे आईं मा!

पन्ना—जब मैंने अपने को असहाय पाया, तो मैं तुम्हारे पिताजी के दरबार में गई। उन्होंने दया कर मुझे तुम्हारे पालन-पोषण का भार सौंपा।

उदय—तुम्हें कभी उनकी याद आती है या नहीं?

पन्ना—याद? कैसे कहूँ, नहीं आती? पर जब मैं तुम दोनो

के अधरों पर हँसी की रेखा देखती हूँ, तो अश्रु-बिंदु सूख जाते हैं।

चंदन—मा! क्या तुमने पिताजी के कभी कोई समाचार नहीं सुने?

पन्ना—विश्वास करने योग्य कुछ भी नहीं। कोई कहता है, वह डाकू हो गए, कोई कहता है, बैरागी हो गए और कोई कहता है—[कंठावरोध]

चंदन—नहीं मा! इस तीसरी बात का उच्चारण भी न करो। यह हो नहीं सकता, झूठ है। मैं अपने मन में किसी दूर देश से पिताजी को पुकारता हुआ पाता हूँ। वह कहते हैं—"चंदन! यहाँ आओ!" मैं अवश्य ही उनके गले लगूँगा। किंतु कब? यह नहीं जानता।

उदय—धाई मा! यह इतने दिनों से क्या हो रहा है? कुछ भी समझ में नहीं आता। महाराना और सरदारों में क्यों इतना विद्रोह फैल गया है? राजसभा का कार्य नियमित नहीं है। प्रजा दुखी क्यों है?

पन्ना—इन सबका कारण एक ही वस्तु है, वह क्या है? ठीक-ठीक कुछ भी समझ में नहीं आता।

उदय—[नेपथ्य को देखकर] महाराना इधर ही आते हैं। इन्हीं से पूछना चाहिए। चित्तौड़ेश्वर की जय हो!

[महाराना विक्रम का प्रवेश।]

विक्रम—मेरे कारण न हो सकेगी, उदय! मेरे कंधों पर

मुझे मेरा सिर ही भारी प्रतीत होता है। उस सिर में अब चित्तौड़ के मुकुट को धारण करने की योग्यता नहीं है।

उदय—आप यह क्या कह रहे हैं? महाराना!

विक्रम—मैं सच ही कह रहा हूँ, उदय! विक्रम के सुख के लिये हो, न हो; पर इसमें चित्तौड़ का मंगल अवश्य ही है।

पन्ना—महाराना, आज क्यों इतने व्यग्र हैं?

विक्रम—तुम कुछ भी चिंता न करो पन्ना! सरदारों ने मुझे सिंहासन से हटाना विचारा है। मैं उनसे पहले ही यह चित्तौड़ का राजमुकुट तुम्हें सौंपने आया हूँ। [मुकुट हाथ में लेकर] उदय! जब तक तुम्हारा नन्हा मस्तक इसके उपयुक्त न हो जाय, तब तक इस मुकुट की रक्षा भी तुम्हीं करोगी पन्ना! [मुकुट पन्ना को देना चाहता है। क्रोधित बनवीर का प्रवेश।] आओ भाई बनवीर! इस अवसर पर तुम्हारा रहना भी आवश्यक था। किंतु यह क्या? तुम चुप हो? तुम्हारी आँखों में क्रोध की लालिमा छाई है। क्या तुम भी मुझसे रूठ गए?

बनवीर—चुप रहो विक्रम! तुम्हारी मित्रता का भेद छिपा न रह सका। तुम नहीं जानते, मैं क्यों आया हूँ?

विक्रम—निश्चय ही मुझे कोई विशेष सम्मति देने आए हो, जिससे मेरे राज्य की विद्रोहाग्नि शांत हो।

बनवीर—नहीं, नहीं, अपनी प्राणवायु देकर भी उसे गगन चुंबी करने को। मैं शांति के लिये नहीं, युद्ध करने आया हूँ।

विक्रम—तुम युद्ध करने आए हो? क्या हम दोनो का एक ही शत्रु नहीं है?

वनवीर—नहीं, हम दोनो एक-दूसरे के शत्रु हैं।

विक्रम—तुम्हारे शब्द भय से भरे हुए हैं। तुम्हारे इस रोष का आधार? इस विषम भाव-परिवर्तन का कारण? इतने अविलंब में?

वनवीर—अपने हृदय पर हाथ रखकर पूछो, विक्रम! यदि मैं कहूँ कि मैं तुम्हारा वध करने आया हूँ, तो न्याय के कानों को यह कुछ भी बेसुरा न प्रतीत होगा।

पन्ना—बड़ी देर से यह क्या सुन रही हूँ, वनवीर! तुम्हारा हिंसा-भाव आज क्यों इतना जागरित है?

वनवीर—तुम उत्तर नहीं देते विक्रम! मैं ही तुम्हारे पथ का प्रबल काँटा हूँ, क्यों? तुमने घातक भेजा, पर वह मुझे न मार सका।

विक्रम—तुम्हारी हत्या को घातक भेजा? यह कैसा अद्भुत सत्य है? इसकी साक्षी—

[रणजीत का प्रवेश।]

रणजीत—मैं दूँगा। मैंने अपनी आँखों से घातक को असफल होकर भागते देखा।

विक्रम—घातक असफल हुआ, यह हर्ष की बात है। पर, उसे मैंने भेजा, यह कौन झूठा कहता है?

रणजीत—यह अनुमान और तर्क कहता है। सभी बातें कोई कहाँ तक देख सकता है?

विक्रम—रणजीत ! तुम भी मेरी सहायता करते नहीं दिखाई देते ? इससे पहले तुम सदैव मेरे ही गीत गाते थे। कभी-कभी ऐसा जान पड़ता है, तुम दोनों पूर्व-मंत्रणा करके परिहास कर रहे हो। अब बहुत हो चुका, यह पीड़ा असह्य प्रतीत होती है।

रणजीत—जीवन और मरण के प्रश्नों को लेकर कौन परिहास करता है ?

बनवीर—तुम्हारा वार चूक जाने पर मुझे अपनी ढाल खोजनी चाहिए या तलवार ? क्यों विक्रम ! तुम क्या उत्तर देते हो ?

उदय—मा ! यह क्या करना चाहते हैं ? चित्तौड़ के महाराना को क्या ऐसे ही संबोधित किया जाता है ?

विक्रम—कुछ समझ में नहीं आता, यह किसका षड्यंत्र है ? तुम्हें मुझसे इस प्रकार किसने विमुख कर दिया ? मैं इस जीवन का मोह छोड़ दूँगा, बनवीर ! यदि तुम अपनी हत्या के बदले मेरा वध करना चाहते हो, तो भूलते हो। सत्य पृथ्वी के टुकड़े-टुकड़े कर प्रकट होगा। हाँ, यदि यह चित्तौड़ के मुकुट के लिये है, तो इतना पश्चात्ताप न होगा। लो, वह यही है। [मुकुट देता है।]

बनवीर—[मुकुट लेकर] लाओ, लाओ, मैं इसकी रक्षा करने को बाध्य हूँ। सैनिको ! विक्रम को बंदी करो।

[चार सैनिकों का प्रवेश।]

पन्ना—[कमर से कटार खींचकर] यह क्या, बनवीर ! सावधान ! मैं धाई ही नहीं, राजपूतनी भी हूँ। मेरे जीवित रहते कोई महाराना को बंदी नहीं कर सकता [विक्रम की रक्षा करती है।]

बनवीर—सैनिको ! देखते क्या हो, बंदी करो। महाराना मैं हूँ।

पन्ना—[सैनिकों को लक्ष्य कर] सावधान ! आगे पैर बढ़ाया नहीं कि टुकड़े-टुकड़े कर डालूँगी।

[चार सरदारों के साथ कर्मचंद का आना।]

कर्मचंद—[पन्ना के हाथ से कटार छीन लेना, पन्ना उन्हें देख आदर प्रकट कर हट जाती है।] शांत होओ, पन्ना ! प्रजा की यही इच्छा है। परमेश्वर का यही आदेश है। अपने स्वार्थ को भूल जाओ। बंदी करो सैनिकगण !

विक्रम—हाँ-हाँ, बंदी करो।

[विक्रम बंदी होता है।]

कर्मचंद—उदय, इधर आओ।

बनवीर—लो, यह राजमुकुट तुम्हारा है। तुम्हारे बड़े होने तक इसकी रक्षा मैं करूँगा। [उदय के मस्तक पर राजमुकुट रख देता है।]

उदय—[मुकुट निकाल भूमि पर रख देता है।] नहीं-नहीं, यह इस प्रकार भारी ज्ञात होता है, मैं इसे सह न सकूँगा।

[शीतलसेनी का प्रवेश।]

शीतलसेनी—कौन ? महाराना विक्रमसिंह ! क्या यह नार के अपमान का बदला है ?

[स्थिर नाट्य]

अगले महल का परदा गिरता है ।

चतुर्थ दृश्य

वनवीर का महल

[वनवीर हाथों में राजमुकुट लेकर आता है ।]

वनवीर—अहो ! स्वर्ण-निर्मित, हीरक-खचित राजमुकुट ! तुम्हारा आकर्षण बड़ा प्रबल है । तुम्हारे स्पर्श ने मुझे भी न-जाने क्या कर दिया ? तुमने समझाया, संसार में मैत्री कुछ भी नहीं, मित्र कोई भी नहीं । तुम जो कुछ और समझाओगे, मैं उसे समझने को भी प्रस्तुत हूँ । [मुकुट मस्तक पर धारण करता है ।] राजधानी का प्रत्येक मनुष्य मेरे विचार पर बोलता है, मेरे संकेत पर नाचता है । मैं बहुत ऊँचा चढ़ गया हूँ ।

[शीतलसेनी का प्रवेश ।]

शीतलसेनी—नहीं, अभी तीन सीढ़ियों चढ़ने को और शेष हैं ।

वनवीर—वे कौन-सी हैं, मा !

शीतलसेनी—समय आने पर तुम्हें स्वयं ज्ञात हों । तुम्हारे मित्र कम हो गए हैं, वनवीर ! तुमने शत्रुओं को कम करने पर विचार नहीं किया ?

वनवीर—जिसे सरदारों के अनुरोध से बंदी किया है, उसी का तुम्हारे अनुरोध से, तुम कहती हो—

शीतलसेनी—हाँ-हाँ, वध करो। परमेश्वर के अतिरिक्त तुम्हारा विचार करनेवाला और कोई नहीं है। उसको उत्तर मेरा अपमान देगा। उस अग्नि से मैं प्रतिपल दग्ध हो रही हूँ, बनवीर! तुम उस पीड़ा का अनुभव नहीं कर पाते।

बनवीर—विक्रम का वध! तुम न-जाने कितने दिनों से यही कह रही हो। क्या हम दोनो एक साथ ही नहीं बढ़े हैं? तुमने विक्रम को भी दूध पिलाया है, मा! वह मेरे ताऊजी का लड़का है। उसकी हत्या न हो सकेगी।

शीतलसेनी—तो फिर अपने प्राण देने को तत्पर रहो।

बनवीर—मुझे किसी का भय नहीं विक्रम को सरदारों ने बंदी किया है, यह राजमुकुट मेरे पास धरोहर है। मेरा शत्रु कौन है, मा?

शीतलसेनी—क्या दूसरी बार भी मुझे ही बताना पड़ेगा?

बनवीर—[कुछ याद कर] तुमने एक बार मुझे जन्म दिया, दूसरी बार विक्रम के भेजे हुए घातक से बचाया। वह भी याद आया।

शीतलसेनी—वही अब फिर न-जाने किस समय तुम्हारे वध की चेष्टा करे। मुझे यही चिंता नोच रही है। कौरव क्या पांडवों के भाई न थे? न्याय और नाते का कुछ भी संबंध नहीं। विक्रम का वध करो, और रक्त सूखने के पहले ही उसी कटार से उदय—

बनवीर—[बाधा देकर] चुपो-चुपो, यह क्या कहती हो? उदय की मा मर गई, उसके बाद कई दिन तक तुमने उसे अपनी

छाती से लगाया। राजनीति के परदे में विक्रम को दंड दिया भी जाय, तो इस अबोध बालक उदय का क्या अपराध है ?

शीतलसेनी—इसके विचार के लिये अभी समय है। तुमने नहीं सुना, विक्रम सरदारों से गुप्त संधि करनेवाला है।

बनवीर—हैं, गुप्त संधि ?

शीतलसेनी—हाँ, मैंने इसकी खोज के लिये रणजीत को भेजा है। यदि विक्रम कारागार से मुक्त हो जाय, तो ?

बनवीर—विक्रम को मुक्त कर कौन सकता है ? सरदार होते कौन हैं ? महाराना मैं हूँ। कटार लाओ, मा !

शीतलसेनी—लो। [कटार देना चाहती है।]

बनवीर—कुछ देर ठहरो। मैं देख लूँ, बाहर अंधकार कितना है। मैं उसमें छिप सकूँगा या नहीं।

[बनवीर का जाना। दूसरी ओर से
रणजीत का घबराए हुए आना।]

शीतलसेनी—क्यों, क्या समाचार है ?

रणजीत—सरदार कर्मचंद कहते हैं, यदि विक्रम न्याय-पूर्वक राज्य करने की प्रतिज्ञा करे, तो उसे फिर मुक्त कर सिंहासन पर बिठा दिया जाय।

शीतलसेनी—जाओ, जाओ रणजीत ! तुम अभी जाकर विक्रम की मुक्ति में यथाशक्ति बाधा पहुँचाओ। याद रक्खो, कर्मचंद को कुछ भी अधिकार नहीं है। मेवाड़ का महाराना बनवीर है।

रणजीत—और मेवाड़ का प्रधान मंत्री ?

शीतलसेनी—तुम्हीं होओ, किंतु तब तक नहीं, जब तक बनबीर का पथ काँटों से भरा है। जाओ, विक्रम को मुक्त न होने दो, शीघ्रता करो।

रणजीत—जो आज्ञा।

[रणजीत का जाना, नेपथ्य को देखते हुए बनवीर का धीरे-धीरे प्रवेश।]

बनवीर—अंधकार, सर्वत्र ही अंधकार है। दिन का साक्षी सूर्य डूब गया है, चंद्रमा कृष्णपक्ष की ओट में है, नीहारिका-नक्षत्र सभी बादलों में छिप गए हैं। मनुष्य दीपक भी बुझा देने को तैयार हैं। इस तमोमयी रात में तुम मेरे हाथ में कटार देकर मेरे शत्रु के घर की राह दिखाती हो, मा!

शीतलसेनी—हाँ, जिस सिंह को बंदी कर छोड़ा है, उसका पिंजरे ही में वध करो।

बनवीर—इसी भीषण वध, अनंत अत्याचार और अविराम हाहाकार ही पर राजसिंहासन ठहरा हुआ है। मैं भी उसी पर बैठना चाहता हूँ। कटार लाओ, मा! [कटार लेकर घुटने टेकती है।] आशीर्वाद दो, यदि यह संसार का सबसे बड़ा पाप भी है, तो इसमें एक पुण्य है। वह पुण्य है तुम्हारी आज्ञा का पालन।

शीतलसेनी—[आशीर्वाद देकर] शत्रु का वध कर अभय होओ।

[दोनो का एक दूसरी ओर को जाना।]

परदा बदलता है।

पंचम दृश्य

अँधेरा कारागार

[शृंखलाओं में जकड़ा विक्रम]

विक्रम — मैं हो विक्रम हूँ। प्रहरी ! नहीं सुनता ? कल तक तू मेरे सामने हाथ बाँधे खड़ा रहता था, आज तलवार खींचे खड़ा है। मैं अपनी वासनाओं का क्रीतदास था, तो क्यों समन्त चित्तौड़ का स्वामी हुआ ? प्रहरी ! नहीं सुनता ! जा, मेरे लिये एक प्याला मद ले आ। उसमें कालसर्प का विष घोल ला कि वही अंतिम हो। जीवन-भर इस मद से युद्ध करता चला आ रहा हूँ। आज इस पराजय की रात में मेरा शत्रु मेरा अंत करे। यह कारागार ही युद्ध-क्षेत्र होगा। मैं हँसते-हँसते विषपान करूँगा, क्या इससे वीर-गति न मिलेगी ? राजकुल ! तुम लालसा के लिये नहीं, मैं भिखारी के घर जन्म लेता। [पन्ना का भोजन की थाली और कपड़े लेकर प्रवेश।] कौन ?

पन्ना—मैं हूँ, महाराना ! धाई पन्ना।

विक्रम—क्यों, किसलिये आई हो ?

पन्ना—नमक अदा करने।

विक्रम—किस तरह ?

पन्ना— [थाली भूमि पर रखकर] यह भोजन करो, और ये कपड़े पहन, इस थाली को उठाकर कारागार से मुक्ति पाओ। यह अँगूठी प्रहरी को दिखाकर दुर्ग का परित्याग करो। [अँगूठी देना चाहती है।]

विक्रम—[अँगूठी लेने को हाथ बढ़ाता है।] और तुम ?

पन्ना—मैं यहीं रहूँगी।

[विक्रम हाथ खींच लेता है।]

विक्रम—बनवीर तुम्हारा वध कर डालेगा, धाई-मा !

पन्ना—यह मैं अच्छी तरह समझती हूँ, महाराना ! राजपूतनी मरने से नहीं डरती।

विक्रम—तब उदय और चंदन की रक्षा कौन करेगा ? तथा मैं ही मुक्ति-लाभ कर कहाँ जाऊँगा ?

पन्ना—उदय और चंदन को अपने साथ लेकर मेवाड़ के बाहर जहाँ भी जाओगे, निरापद रहोगे। संग्रामसिंह का नाम सैनिकों को एकत्र कर देगा। तुम्हारी इन नसों में उसी वीर-केसरी की बिजली है। केवल तुमने उसे भुला दिया है। वह जिस दिन स्मरण हो जायगा, उस दिन एक नहीं, शत-सहस्र बनवीर तुम्हारे सम्मुख नहीं ठहर सकते। लो, शीघ्रता से भोजन करो, और मुक्ति पाओ।

विक्रम—नहीं मा ! ऐसा न होगा। मैंने अवश्य ही अपराध किए हैं, मुझे क्षण-भर भी दंड और विचारक का ध्यान नहीं हुआ। इस अँधेरे कारागार में मुझे जकड़ा रहने दो, यह मुझे

[illegible] होता है। पन्ना! मैं मंत्री हूँ, तो क्या हुआ है और-शिरोमणि महाराणाओं का रक्त मेरी नसों में है। मैं-मर्द हूँ, [illegible] तुम मुझे कारागार के [illegible] हो। नहीं मा! मैं इस देश के स्वर्ग के मंदिर भी न जाऊँगा।

[हाथ में दीपक लिए उदय का
के साथ प्रवेश।]

उदय—[आगे बढ़कर] उठो भाई! पितृ-तुल्य सरदार कर्मचंद के समीप प्रतिज्ञा करो। तुम्हें उपदेश लेने का अवसर मिल गया। यह तुम्हें मुक्त करने आए हैं। तुम भविष्य में सत्पथ ग्रहण करोगे?

विक्रम—मैंने अभिमान के मद से भरी सभा में इनके ऊपर तलवार उठाई थी। यह मुझे क्षमा करेंगे, तो मैं भी भगवान् एकलिंग को साक्षी कर प्रतिज्ञा करता हूँ कि प्रजा को संतानवत् पालूँगा।

कर्मचंद—रवि-कुल-भूषण! यही तुम्हारे योग्य बात है। तुम फिर मुक्त होकर मेवाड़ के महाराना बनो।

पन्ना—महाराना विक्रम की जय!

कर्मचंद—प्रहरी! महाराना के बंधन खोल दो।

[प्रहरी का आकर ज्यों ही महाराना के
बंधन खोलना, त्यों ही रणजीत का प्रवेश।]

रणजीत—प्रहरी, सावधान! यह किसकी आज्ञा है? [प्रहरी को हाथ खींचकर हटा देना।] मंत्री महोदय! जब समस्त

सरदारों की मंत्रणा से इन्हें बंदी किया है, तो केवल एक की इच्छा और आज्ञा से इन्हें मुक्त करना उचित नहीं। आप हमारे पूज्य हैं, हमसे अधिक राज्य का अनुभव रखते हैं। जब बनवीर महाराना हो चुके हैं, तो क्या इस शीघ्रता से उनके हृदय पर आघात न होगा? कलह न बढ़े, चित्तौड़ में शांति रहे।

कर्मचंद—ऐसा ही सही। चिंता न करो, महाराना! यह तुम्हारे प्रायश्चित्त की अंतिम रात है। कल प्रभात होते ही तुम मुक्त हो जाओगे।

उदय—आप महाराना को अभी मुक्त न करेंगे?

कर्मचंद—धीरज रक्खो, बेटा! तुम अभी बालक हो। ये सब बातें नहीं समझ सकते। रात के बीतने में कितने युग समाप्त होंगे?

पन्ना—तुमने आज कुछ भी नहीं खाया, कुछ खा लो।

विक्रम—नहीं मा! अभी कुछ भी इच्छा नहीं है। इसे यहीं छोड़ जाओ, जब इच्छा होगी, खा लूँगा। आप सभी लोग जायँ। रात बहुत बीत चली।

कर्मचंद—चलो पन्ना।

पन्ना—चलिए।

उदय—यह दीपक यहीं छोड़ जावेंगे।

[विक्रम के सिवा सबका जाना।]

विक्रम—[दीपक के प्रति] सूर्य की अनुपस्थिति में तुम्हीं

अँधेरे पथ पर प्रकाश डालते हो, दीपक ! तुम्हें प्रणाम है। कारागार मेरे पूर्वजों द्वारा निर्मित है। इसमें उन्होंने कभी दीपक नहीं जलाया, मैंने भी नहीं जलाया, फिर मेरे लिये ही यह क्यों जले ? कदाचित् इस अंधकार में ही मेरे पाप छिप जायँ [दीपक को बुझा देता है।], और शायद मुझे कोई पथ दिखाई दे। मैं मूक ही रहूँगा।

[बनवीर का सावधानी से कटार लेकर
चारो ओर देखते हुए प्रवेश।]

बनवीर—[स्वगत] मूर्तिमान् पाप इसी अंधकार में रहता है। इसे मिटाना होगा। उसकी साँस का शब्द भी नहीं सुनाई पड़ता।

विक्रम—किसी के पैर की आहट है। इस अंधकार में स्पष्ट नहीं दिखाई पड़ते, कौन हो तुम ?

बनवीर—यह मत पूछो।

विक्रम—मैं कंठ-स्वर पहचान गया। तुम मेरे मित्र बनवीर हो।

बनवीर—तुम फिर-फिर मुझसे मित्रता चाहते हो, मैं तुम्हारा सबसे बड़ा शत्रु हूँ। विक्रम ! तुम नहीं जानते, आज मेरी कटार तुम्हारा रक्त चाहती है।

विक्रम—मुझे इसका भय न हो। मेरे हाथ-पैर बँधे हैं। बड़ी सुगमता से तुम मुझे मार सकोगे। किंतु ठहरो, मुझे मेरा अपराध ज्ञात हो।

बनवीर—ठीक-ठीक कुछ भी नहीं जानता। जो कुछ जानता हूँ, उसके समझाने को समय नहीं है।

विक्रम—एक बात न सुनोगे ?

बनवीर—सुनूँगा, कहो।

विक्रम—मेरे बंधन खोल मुझे मुक्त कर दो बनवीर ! राज-मुकुट तुम्हारा ही रहे। मैं तुम्हारे राज्य की सीमा से बाहर चला जाऊँगा। मैं संन्यासी होकर तीर्थ-वास करूँगा।

बनवीर—न बोलो विक्रम, मैं कुछ भी न सुनूँगा। तुम्हारे शब्द मोह उत्पन्न कर रहे हैं।

विक्रम—बनवीर ! बनवीर !

बनवीर—अब कुछ भी नहीं, यही अंत है !

[विक्रम की छाती में कटार भोंकता है।]

विक्रम—[पृथ्वी पर गिरते-गिरते] हा भगवान !

बनवीर—[विक्रम की छाती पर हाथ रखकर] विक्रम ! महाराना विक्रम !

[बनवीर विक्रम के हाथ की नाड़ियों पर उँगलियाँ रखता है, और उसे मृत जानकर, उसकी छाती से कटार खींचकर सावधानी से भाग जाता है।

अगले रास्ते का परदा गिरता है।

षष्ठ दृश्य

अँधेरा पथ, आँधी और बिजली

[अकेले रणजीत का आना ।]

रणजीत—अवश्य ही राजमंत्री बनूँगा ! किंतु यदि शीतल-सेनी ने आँखें बदल लीं, तो क्या होगा ? तो भी चिंता कैसी ? [भीतरी जेब से शीतलसेनी की लिखत निकालकर] क्या यह उसी के हस्ताक्षर नहीं हैं ? क्या इसमें उसके समस्त छल-प्रपंच को खोल देने की शक्ति नहीं है ? अहा ! शब्दों की कालिमे ! तुम मेरे लिये कितने मधुर अर्थ की छाया हो । इसी पर प्रधान मंत्री का आसन स्थिर होगा । [नेपथ्य में शीतलसेनी को देखकर लिखत जेब में रख लेता है ।] कौन ? वही है ।

[बिजली चमकती है । शीतलसेनी का आना ।]

शीतलसेनी—तुम यहीं पर हो ?

रणजीत—राजमाता ने मुझे यहाँ से हटने की आज्ञा ही कब दी थी ?

शीतलसेनी—रणजीत ! बनवीर के आने में बड़ी देर हो गई । विक्रम को देखकर उसके विचार तो नहीं बदल गए ?

रणजीत—नहीं मा, इसी पथ से तो अभी महाराना गए

हैं। उनके शरीर से चिनगारियाँ निकल रही थीं। उनकी चाल से जान पड़ता था, वह अवश्य ही शत्रु को समाप्त करेंगे।

[वनवीर का आना।]

वनवीर—कौन? मा! तुम यहाँ?

शीतलसेनी—हाँ, तुम्हारी सहायता को, क्या समाचार हैं?

वनवीर—तुम्हारे अपमान की अग्नि और मेरी कटार की प्यास, दोनो एक साथ ही बुझीं।

शीतलसेनी—विक्रम का वध?

वनवीर—हाँ, हो चुका। यह उसी के रक्त की रँगी कटार तुम्हारे चरणों की भेंट है। [कटार शीतलसेनी के चरणों के पास रखता है।]

शीतलसेनी—चिरजीवी होओ वनवीर! विक्रम मर चुका?

वनवीर—हाँ, ज्यों ही मैंने उसकी छाती में कटार भोंकी, वह भूमि पर गिर पड़ा। मैंने उसकी साँस पर हाथ रखकर पुकारा—'विक्रम! महाराना विक्रम!' तुम्हें दासी कहनेवाले, मेरे रक्त के प्यासे ओष्ठाधर सदा के लिये बंद हो गए थे।

शीतलसेनी—तुम मातृ-ऋण से उऋण हुए, वत्स! किंतु जब तक उदय जीता है, विक्रम को मिटा न समझो। इसके रक्त में सने हाथ उसके रक्त से धोओ इसके पश्चात् केवल एक रक्तपात, और फिर सिंहासन पर वनवीर और चित्तौड़

में शांति ! शीघ्रता करो, यह रात बड़ी ही सुखद है। कल का सूर्य और तुम्हारा सौभाग्य, दोनों एक साथ ही उदय होंगे।

वनवीर—ठीक है, यह बड़ा होकर विक्रम का वध न भूल सकेगा। हो, उसका भी अंत हो।

[शीतलसेनी भूमि पर से कटार उठाकर वनवीर को देती है। फिर बिजली चमककर कड़कती है।]

शीतलसेनी—लो, जाओ, उदय इस महल में सोता है।

वनवीर—मुझे भले प्रकार ज्ञात है।

[वनवीर का जाना।]

शीतलसेनी—मैं वनवीर की दुर्बलता भी जानती हूँ। यदि उसने उदय को बालक समझकर कटार फेक दी तो ?—

रणजीत—आज्ञा दो देवी ! हे प्रधान मंत्री के पद ! तेरे लिये ! कहो राजमाता ! भूचाल में चलूँ, या प्रलय में नाचूँ ?

शीतलसेनी—जाओ, वनवीर का अनुसरण करो। यदि वह उदय को न मार सके, तो तुम उसका वध कर डालना।

रणजीत—जो आज्ञा।

शीतलसेनी—याद रक्खो, उदय तुम्हारे मंत्री-पद का भी उतना ही भयंकर शत्रु होगा।

रणजीत—मैं जानता हूँ इसे। यदि मैं उसका वध करूँगा, तो उसके रक्त की बूँदें तुम्हारी लिखत पर लाख-मुहरें होंगी।

[रणजीत का तलवार खींचकर जाना।]

शीतलसेनी—जाओ, अगर तुम भी उस बालक को न मार सकोगे, तो मैं भी आती हूँ। मैं उसका वध कर डालूँगी।

[शीतलसेनी भी कमर से कटार निकाल-
कर उसी ओर चली जाती है।]

पट-परिवर्तन

सप्तम दृश्य

उदय का शयन-कक्ष

[पलँग पर उदय सोया है, सिरहाने दीपक है, पैर की ओर पन्ना भूमि पर बैठी है, उसकी गोद में चंदन सिर रक्खे सोया है। उदय पड़े-पड़े कुछ बेचैनी प्रकट करता है, पन्ना उसे चिंतित होकर लक्ष्य करती है, फिर चंदन की ओर देखकर उसे अपनी चादर का एक छोर ओढ़ा देती है।]

उदय—[उठकर] धाई-मा ! धाई-मा ! यदि सरदारों ने कल प्रभात-समय महाराना विक्रम को मुक्त न किया, तो क्या होगा ?

पन्ना—तुम अभी तक नहीं सोए। चिंता न करो, विक्रम कल अवश्य मुक्त होंगे। रात को इतनी देर तक जागते रहोगे, तो बीमार पड़ जाओगे।

उदय—तुम भी तो अभी तक जाग ही रही हो। तुमने चारण से एक गीत याद किया था। मैं उसी को सुनते-सुनते सो जाना चाहता हूँ।

पन्ना—वही गीत ? तुमने कई वार उसे सुना है ? [गाती है।]

सिंध काफ़ी—तीन ताल

हे मेवाड़ - प्रदेश ! धरा पर
तेरी स्तुति गाते हैं सुर - नर ।

(१)

किया प्रकृति ने तुझको सुंदर,
उपजाए नाना गिरि - प्रांतर ।
वन-उपवन, सरिता - सर - निर्झर,
नील तारिकामय नभ ऊपर ।

(२)

कुंभ - खुमान - समान वीरवर,
बप्पा - साँगा - से नर - कुंजर ।
चमकी वसुधा जिनको पाकर
जयति सूर्य-कुल, जयति तिमिरहर ।

[उदय गीत सुनते-सुनते सो जाता है ।]

(३)

अबलाओं ने भी असि लेकर
किए जहाँ पर युद्ध भयंकर ।
जिनके अमर हुए हैं जौहर,
हो नति उन सतियों के पद पर ।

(४)

तेरा यश फैला है घर - घर,
तेरा रण - तांडव प्रचंडतर ।

सुन्दर छवि कंपित है थर-थर,

सोती आज तुझे सब-बिसरकर ।

पन्ना—[गीत समाप्त कर] सो गया ? [अचानक नेपथ्य में क्रंदन-ध्वनि ।] यह रोने की ध्वनि क्या महलों से आती है ?

[टोकरी में जूठी पत्तलें और झाड़ लिए हुए बारी का आना ।]

बारी—पन्ना ! सर्वनाश हो गया ! [टोकरी भूमि पर रख देता है ।]

पन्ना—[चंदन का सिर धीरे-से भूमि पर रख, घबराकर उठती है ।] क्या हुआ ? क्या हुआ ? बारी !

बारी—बनवीर ने कारागार में महाराना विक्रम का वध कर डाला !

पन्ना—हा भगवान् ! [रोती है ।]

बारी—शोक को छोड़ो, रोने का समय नहीं है । वह अब उदय की हत्या करने यहाँ भी आवेगा ।

पन्ना—उदय की रक्षा का कोई उपाय ?

बारी—नहीं सूझता ।

पन्ना—कोई आशा ?

बारी—नहीं, घातक की दया पर छोड़ने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं ।

पन्ना—वह पत्थर न पसीजेगा । तुम उदय को किसी प्रकार दुर्ग के बाहर ले चलो ।

बारी—उदय को न पाकर बनवीर तुम्हें मार डालेगा,

तुम्हारे बिना राजकुमार उदय कैसे जिएँगे ? उनकी रक्षा कौन करेगा ?

पन्ना—[भाव बदलकर] तब उदय को यहीं रहने दो। [उत्तेजित होकर] मैं उसकी राह रोक लूँगा, उसका हाथ झटक तलवार छीन लूँगी। तलवार के टुकड़े-टुकड़े कर फेंक दूँगी। सावित्री ने यम के पंजे से अपने स्वामी को छुड़ायाथा, क्या मैं मनुष्य के हाथ से अपने स्वामी के पुत्र को न छुड़ा सकूँगी ? अवश्य छुड़ाऊँगी। बनवीर के हृदय में दया है, वह मेरा आदर करता है।

बारी—नहीं मा ! राजमुकुट पहनने के बाद वह बनवीर नहीं रहा।

पन्ना—हे भगवान् ! क्या चित्तौड़ का वंश इस प्रकार समाप्त हो जायगा ? मेवाड़ के रक्षक देवताओ ! कोई उपाय बताओ। यह दीन अबला अपनी बलि देकर भी स्वामी की रक्षा चाहती है। [कुछ क्षण विचार-मग्न और निस्तब्ध रहकर क्रमशः स्वर ऊँचा करती है।] मेरे लाल के रक्त की प्यासी चित्तौड़ेश्वरी ! तू यह पथ दिखाती है ? ऐसा ही हो बारी ! तुम्हारी इस टोकरी में मैं उदय को सुला देती हूँ। तुम साव-धानी से दुर्ग के बाहर भाग जाओ, और बेरिस-नदी के किनारे, श्मशान में, मेरी प्रतीक्षा करो।

बारी—यह तो फिर वही बात आई, बनवीर को क्या उत्तर दोगी ?

पन्ना—मैं उसकी आँखों में धूल डाल दूँगी।

बारी—किस तरह ?

पन्ना—उदय की जगह किसी और को सुलाकर।

बारी—किसे सुलाकर ?

पन्ना—देख-देख, बारी! मेरी छाती बनवीर से भी कठोर हो गई !

बारी—राक्षसी मा, किसे सुला देगी ?

पन्ना—इसे, चंदन को, अपने लाल को।

बारी—मृत्यु की ममता हीन गोद में ? स्वामी के ऋण का ऐसा प्रतिशोध ! तुम्हें प्रणाम है देवी ! तुम प्रातर्वंदनीय हो।

पन्ना—नहीं, डायन हूँ, राक्षसी हूँ। मैं कसाई के छुरे के नीचे अपने वत्स को रख दूँगी। बारी! देर न करो, उदय को बचाना है, तो वहीं ले चलो।

[पन्ना टोकरी से जूठी पत्तलें निकाल उसमें एक कपड़ा बिछाती है। उसमें धीरे से उदय को लिटा देती है। ऊपर से एक हलकी चादर डाल उसके ऊपर फिर पत्तल रख देती है।

बारी—बस, ले चलूँ ?

पन्ना—हाँ, शीघ्र, अति शीघ्र, मेरे विचार के बदलने और बनवीर के यहाँ आने से पहले ही।

बारी—परमेश्वर तुम्हारी रक्षा करे।

[पन्ना की मदद से भारी टोकरी को अपने सिर पर रख लेता है, और चला जाता है।]

पन्ना—[चंदन के प्रति] सो रहा है अभागा पितृहीन बालक। कठोर भूमि, लाल ! अब यही तुम्हारी अंतिम गोद है। मैं सर्पिणी हूँ, पर मैंने अपने बच्चे को ग्यारह साल पालकर खाया। चलो तात ! स्वामी के लिये प्राण देने में जो स्वर्ग मिलता है, तुम्हारा आसन वहाँ ऊँचा हो, और पुत्र की हत्या करने के लिये जो रौरव हो, मेरा वहीं पतन हो। [सावधानी से भूमि से चंदन को उठाकर पलँग पर सुला देती है।] इस सेज पर तुम कभी नहीं सोए। अब न जागना, जागने से सारा भेद खुल जायगा। [ओढ़ा देती है, फिर मुख खोलकर।] यह स्वामी का तावीज़ है, इससे तुम्हारी भी याद आवेगी। इसे निकाल लेती हूँ। [तावीज़ निकालकर फिर मुख ढक देती है।] नहीं अभी नहीं। अभी उसके आने में देर है। [फिर मुख खोलकर] तब तक मैं इसका मुख देखती ही रहूँगी। [चूमना चाहती है।] नहीं, कहीं जाग उठेगा। अब नहीं। कैसा सुंदर मुख है ! देवताओं ! इसकी साक्षी देना। कुछ देर और, नहीं, नहीं। यह उसी की आहट है। [चंदन का मुख ढक देती है।]

[बनवीर का रक्त से रँगी कटार लेकर प्रवेश।]

बनवीर—पन्ना !

पन्ना—कौन ? बनवीर ! तुम्हारे हाथ में कटार ? इसमें किसका रक्त ?

बनवीर—हाँ, हाँ, पन्ना, उदय कहाँ है ?

पन्ना—[बनवीर के चरणों में गिरकर] शान्त करो बनवीर ! तुम तो सद्गुण के संरक्षक हो । पाप और पुण्य का विचार करो ।

बनवीर—क्या शत्रु का वध क्षत्रिय का पुण्य नहीं है ? क्या माता की आज्ञा का पालन पुत्र का धर्म नहीं है ?

पन्ना—[उठकर बनवीर का सामना करती है ।] मदोन्मत्त पापी ! तू पथ से भ्रष्ट है । मैं तेरे वध में बाधा दूँगी ।

बनवीर—पन्ना ! तू हट जा, नहीं तो मैं तेरी भी समाप्ति कर दूँगा । [सेज की ओर देखकर ।] यही है । [सेज की ओर बढ़ता है, पन्ना रोकती है । बनवीर पास जाकर ज्यों ही वध के लिये कटार ऊँची करता है, त्यों ही—]

पन्ना—ठहर, ठहर अंधे घातक ! अब भी देख, अपनी ही कटार के संकेत को समझ । यह ऊँची होकर कहती है, डर, [आकाश को उँगली से दिखाकर] उसको डर ।

बनवीर—नहीं, वरन् यह कहती है, ऊपर चढ़ने का यही पथ है ।

[बनवीर उदय के धोखे में चंदन
का वध करता है ।]

पन्ना—हाय ! राक्षस ! [भूमि पर गिरकर मूर्च्छित हो जाती है ।]

[बनवीर धीरे-धीरे चंदन की छाती के रक्त में रँगी कटार बाहर निकालता है। एक तरफ़ से शीतलसेनी और दूसरी ओर से रणजीत का आना।]

बनवीर—तुम यहीं आ पहुँची, मा! लो, तुम्हारी आज्ञा का पालन हो चुका। [शीतलसेनी को कटार देता है।]

शीतलसेनी—लाओ, लाओ, शत्रु के रक्त से तुम्हारा राज-तिलक करूँगी।

रणजीत—महाराना बनवीर की जय!

[बीच में बनवीर, एक ओर से शीतलसेनी कटार के रक्त से बनवीर का तिलक करती है, दूसरी ओर रणजीत अपनी तलवार से छाया करता है। पन्ना भूमि पर मूर्च्छित पड़ी है। स्तब्ध दृश्य।]

य व नि का

द्वितीय अंक

प्रथम दृश्य

बेरिस-नदी के किनारे श्मशान

[नदी-किनारे एक नाव बँधी है। बारी का आकर टोकरी ज़मीन पर रखना। उदय का जागना और उठकर चकित होना।]

उदय—सच-सच कहो बारी ! तुम इस भयानक श्मशान में मुझे क्यों ले आए ? तुम इस टोकरी में उठा लाए, यह और भी संदेह उत्पन्न करता है कि तुम्हारा अभिप्राय अच्छा नहीं है।

बारी—मैं कुछ नहीं जानता, धाई पन्ना ने ऐसी ही आज्ञा दी।

उदय—तुम झूठ तो नहीं कहते ? तुम्हारी कोई कुटिल अभिसंधि तो नहीं है ? तुम मेरे वस्त्राभूषण लेने के लिये इस एकांत में मेरा वध तो न करोगे ?

बारी—वध नहीं, पर वधिक के हाथ से बचाने लाया हूँ, राजकुमार !

उदय—[कंपित होकर] तुम किस भयानक घटना का आभास देते हो ? मैं इस प्रभात में महाराना विक्रम को मुक्त देखना चाहता था। तुमने यह क्या सुनाया ?

बारी—पन्ना ने इसी श्मशान में मिलने को कहा है। वह आती ही होगी, उसके आने पर सब प्रकट हो जायगा।

उदय—तुम्हारी सच्चाई का विश्वास कर भी मेरा हृदय काँपता है, बारी! चलो, उस टीले पर बैठें, वहीं धाई-मा की प्रतीक्षा करेंगे।

[दोनों का प्रस्थान। बाल खुले, बेसुध पन्ना का पुत्र का शव लेकर गाते हुए आना।]

कालिंगड़ा—तीन ताल

तुम जागो लाल! निशा बीती।
तुम जीवन दे जीते रण को,
मैं विष के घूँट पिए जीती।

[१]

सूखी सूर-सरिता ममता की,
छाती वज्र हुई, गोद रीती।

[२]

सुत-संहारिणि डायन है मा,
इस जग की अति विषम प्रतीती।

पन्ना—[गीत समाप्त कर] तू चुप क्यों है लाल! सूर्योदय हो गया, तू क्या सोता ही रहेगा? उठ-उठ, तू आज्ञाकारी है, आलसी भी नहीं। [कुछ सुधि आकर] मुझे क्या हो गया? मैं कहाँ आ गई? [इधर-उधर देखकर] हैं! श्मशान में? इसकी

छाती में रक्त है, इसे वनवीर ने मार डाला है। मेवाड़ के सिंहासन से तो इसका कुछ भी संबंध नहीं। फिर इसका अप-राध? इसे वनवीर ने नहीं मारा। इसकी घातिनी मैं हूँ। [रोती है।]

[एक संन्यासी का आना]

संन्यासी—इतने करुण स्वर से विलाप करनेवाली तुम कौन हो? जो आया है, वह अवश्य ही जायगा, क्या तुम इस अटल सत्य को नहीं जानतीं?

पन्ना—मैं जानती हूँ, महाराज! इन आँसुओं का भी तो कुछ उपयोग है?

संन्यासी—इनकी रक्षा कर। यदि सुख के समय इन्हें बहा सकेगी, तो दुख हास्य से खिल उठेगा।

पन्ना—तुम्हारा हृदय मरु-स्थल है संन्यासी! तुम माता की ममता नहीं जान सकते। देखो-देखो, क्या यह सुंदर मुख इतने शीघ्र मुरझाने के लिये था?

संन्यासी—मृत्यु के समीप सभी तर्क पराजित हैं। कोई भी नहीं बता सकता कि यह क्यों मरा? इसकी चिता चुन, मैं तेरी सहायता करूँगा। अपने मोह को इसके साथ ही जलाकर चली जा।

पन्ना—इसे जला दूँ? नहीं-नहीं, इसे जिलाऊँगी। मैं वन-पर्वतों से इसके लिये संजीवनी खोज लाऊँगी। मैं देवी-देवतों से इसके जीवन की भीख माँगूँगी। [संन्यासी को

सिर से पैर तक देखकर] तुम्हारा कैसा तेज-पूर्ण रूप है। तुम सिद्ध-महात्मा हो, मेरे पुत्र को जिला दो महाराज !

[चंदन को संन्यासी के चरणों पर रखती है।]

संन्यासी—यह परमेश्वर की इच्छा की पूर्ति है, इसका बाधक कोई सिद्ध नहीं हो सकता। जो जिएगा, वह अवश्य ही मरेगा, जो उदय होगा, वह अवश्य ही अस्त होगा।

पन्ना—[उदय शब्द को सुनकर राजकुमार उदय की स्मृति जागने से एकाएक भाव बदल देती है।] हूँ! उदय का अस्त ? नहीं-नहीं, महाराज, न होगा। यह बलि मैंने उसी के लिये दी है। मैं कहाँ भटक गई थी ?

संन्यासी—[कुछ न समझकर] तुम क्या कहती हो ?

पन्ना—कुछ भी नहीं, महाराज ! मैं मूक ही रहूँगी। मुझे आप ही आज्ञा दें, मैं अब इसे [चंदन को दिखाकर] छोड़कर उसी का पालन करूँगी।

सन्यासी—तो जाओ, सामने धूनी जल रही है, वहाँ से अग्नि ले आओ। मैं तब तक इसकी चिता चुनता हूँ।

[पन्ना का जाना। गत बजती है। सन्यासी का चिता चुनकर उस पर चंदन को रखना। पन्ना का अग्नि लेकर प्रवेश। गत बजनी बंद होती है।]

पन्ना—मैं अग्नि ले आई हूँ।

संन्यासी—इसको चिता में स्थापित कर, तेरा कल्याण हो, मैं चला।

[फिर गत बजती है। पन्ना चिता में अग्नि स्थापित करती है। संन्यासी जाता है। चिता धधक उठती है।]

पन्ना—जाओ-जाओ लाल! देश और काल की परिधि से मुक्त उस सनातन लोक को प्रस्थान करो, जहाँ की माता संतान के प्राणों की प्यासी नहीं। चंदन! नहीं-नहीं, उदय!

[बारी और उदय का आना।]

उदय—मा! मा! हम तुम्हें खोजते ही रह गए। बारी कहता है, बनवीर ने महाराना की हत्या कर दी! यह सच है मा?

पन्ना—हाँ, यह सच है।

उदय—चंदन कहाँ है?

पन्ना—चंदन? [चिता की ओर देखकर फिर उदय को देखती है।] तू ही चंदन है। [फिर चिता की ओर देखती है।]

उदय—इन आग की लपटों में तुम ध्यान पूर्वक किसे देख रही हो मा? मुझसे बारी ने सब कुछ कह दिया। चलो मैं उस पापी बनवीर को दंड दूँगा।

पन्ना—नहीं-नहीं, आज मेवाड़ का तिल-तिल तुम्हारा शत्रु है। हम देवलराज की शरण में जावेंगे, उन पर तुम्हारे पिता ने कई उपकार किए हैं। वह अवश्य तुम्हारी रक्षा करेंगे।

लो, यह ताबीज मैंने चंदन के गले से निकाल लिया था। इसे तुम पहने रहो। अपना असली परिचय किसी को न देना। पूछने पर अपना नाम चंदन और मुझे अपनी माँ बताना।

[उदय के गले में ताबीज पहना देती है।]

उदय—ऐसा ही कहूँगा माँ!

पन्ना—बारी, तुम्हारे उपकारों की ऋणी हूँ, यह भेद प्रकट न हो।

बारी—नहीं माँ!

पन्ना—आओ उदय! नहीं-नहीं, चंदन! सौभाग्य से यह नाव बँधी है। हम इस पर चढ़कर नदी के पार चलें। उदय को रक्षा में सौंपकर मैं शीघ्र ही चित्तौड़ वापस आऊँगी, बारी! तुम प्रकट करो कि पन्ना उदय का अंतिम संस्कार कर, चंदन को लेकर अपने पीहर चल दी।

बारी—यही होगा, भगवान् तुम्हारे रक्षक हों।

[बारी की मदद से पन्ना और उदय
का नाव पर चढ़ना, और नदी-पार जाना।
दूसरी ओर से बारी का जाना।]

पट-परिवर्तन

द्वितीय दृश्य

वनवीर का महल

[विजय-गर्विता शीतलसेनी गाती हुई आती है।]

खम्माच—तीन ताल

तू नाच मधुर मति से।
प्रतिहिंसे ! हे रक्त-रंगिणी,
चपले ! चंचल पग से, यति से।
(अंतरा)
भीमे ! चमक प्रलय में, रण में —
ब्रह्मांडों में कण-कण में ;
हो उल्लसित त्रिनेत्र महेश्वर,
जगे पराभव तांडव-गति से।

शीतलसेनी—संग्रामसिंह का वंश मिटा दिया, किसने ? वनवीर ने। वनवीर किसका साधन है ? मेरा। मुझे यह कौन नचा रही है ? मेरे मनोराज्य में रहनेवाली आकांक्षा। आकांक्षे ! तेरी तृप्ति न होगी क्या ? तू क्या चाहती है ? तुझे मेवाड़ का राजमुकुट दिया, दिल्ली का सिंहासन भी दूँगी।

बनवीर—आप क्या समझते हैं ?

कर्मचंद—न पूछो बनवीर ! उसे न पूछो । तुम तो हृदय के संरक्षक थे ।

रणजीत—चित्तौड़ के महाराना के समीप सोच-समझकर कुछ बोलिए ।

कर्मचंद—चुप रहो चाटुकार ! तुम्हारी वाणी में विष है । तुम तलवार की छाया में इस रक्त को नहीं छिपा सकते ।

बनवीर—कौन-सा रक्त ? किसकी हत्या ?

कर्मचंद—सोये और भोले हुए दो भाइयों की हत्या । वह तेरे माथे पर खुदी हुई है । वह आग-पानी से धुल नहीं सकती, यह सोने-मोती से ढक नहीं सकती ।

बनवीर—तुम भूल रहे हो सरदार ! यदि मैंने विक्रम का वध किया है, तो क्या संकेत आपने नहीं दिया ? मेरे काले बालों में यह रक्त छिप जायगा, पर आपकी सफेद दाढ़ी को रँग देगा ।

कर्मचंद—राजमद के अंधे ! क्या तू यही देख रहा है ? तुझे इस हत्या के लिये क्या मैंने अग्रसर किया ?

बनवीर—विक्रम को बंदी कर, मुझे उसके सिंहासन पर बिठानेवालों में क्या आपके और आपके पुत्र जयसिंह के शब्द सबसे ऊँचे न थे ?

कर्मचंद—पर तेरे हाथों में रक्षा का भार सौंपा गया था, वध के लिये कटार न दी गई थी ।

बनवीर—उसको मैंने अपनी बुद्धि से हाथ में लिया। आपने मुझसे सिंह को छेड़कर बंदी करने को कहा। मैंने उसका वध किया, तो कौन-सा नीति-विरुद्ध काम किया? वह घायल सिंह कभी-न-कभी पिंजरा तोड़कर सबसे पहले मुझ पर झपटता। अवश्य ही कुछ लोग भी उसका साथ देते। उनके वार को बचाने के लिये हमें भी अपनी तलवारें सँभालनी पड़तीं। मेवाड़ में कुछ रक्त की बूँदें बहाकर मैंने लहू की नदी रोकी है।

कर्मचंद—तूने अवश्य ही लहू की नदी रोकी है, बनवीर! जिस दिन उसका बाँध टूट जायगा, उस दिन उसके वेग में तू, तेरी कटार और तेरा सिंहासन, कोई भी स्थिर न रह सकेगा। चांडाल! तूने अपनी विष-भरी श्वास से बप्पा रावल के वंश का दीपक बुझा दिया! वह तेरी अंतिम श्वास न हुई।

रणजीत—अब असह्य है महाराना! आज्ञा दीजिए। आपके मान के लियेमेरा मस्तक नीचा ही नहीं है, वह उसकी रक्षा के लिये अलग भी हो सकता है। [तलवार की मूठ पर हाथ रखता है।]

बनवीर—आवेश में न आओ रणजीत! इसकी आवश्यकता नहीं है। [कर्मचंद से] हाँ-हाँ, मैंने ही उदय का वध कर विक्रम के वध को पूर्ण किया। विक्रम को राजसिंहासन के लिये मारा। राजसिंहासन तुम्हारे अनुरोध से स्वीकार किया। आज तुम्हीं मुझे सबसे पहले दोषी ठहराते हो? क्या मैंने

पहले ही तुमसे नहीं कहा था कि मुझे राज्य नहीं चाहिए। जाओ-जाओ, तुमसे जो हो सके, करो। यदि तुमने और अधिक बाधा दी, तो यह बच्चों को मारनेवाला हाथ इस बूढ़े के लिये भी न रुकेगा।

कर्मचंद—पापी ! हत्यारे ! तू ऐसा क्या करेगा ? तेरा दर्प दलित हो। मैं अपने दुर्बल कर से समस्त मेवाड़ को प्र-ज्वलित करूँगा, सिंहासन पर घातक राक्षस है, इसी ने विक्रम का वध किया, इसी ने उदय की हत्या की।

[एक ओर प्रस्थान, दूसरी ओर से शीतल-सेनी का प्रवेश।]

शीतलसेनी—यह ज्वालामुखी क्यों फट पड़ा ? इसका मुख सुवर्ण की श्रृंखला और मान-पदवी के जाल से जकड़ देना पड़ेगा।

बनवीर—मैं भी यही सोचता हूँ। कदाचित् कर्मचंदजी को यह संशय हो गया कि राजसभा में अब उनका आदर न होगा। मैं उनसे क्षमा माँग लूँगा। हमें प्रधान मंत्री के पद के लिये उनसे अधिक योग्य मेवाड़-भर में कोई और न मिलेगा।

रणजीत—राजमाता ! राजमाता ! क्या यह सच है ?

[शीतलसेनी संकेत द्वारा रणजीत से चुप रहने को कहती है।]

शीतलसेनी—कर्मचंद से क्षमा माँगने की कोई भी आव-श्यकता नहीं है।

रणजीत—यह बिलकुल सच है। इससे वह बूढ़ा और सिर पर चढ़ेगा। तुम्हें किसका भय है, बनवीर? तुम मेवाड़ के महाराना हो। राजकोष तुम्हारा है, सेना तुम्हारी है।

बनवीर—निस्संदेह जब तुम सहायक हो, तो मुझे कौन डरा सकता है?

[आवेश के साथ जाना ।]

शीतलसेनी—यह कर्मचंद ही मेरी अंतिम बाधा है।

रणजीत—और मेरा पहला काँटा।

शीतलसेनी—इसी के कारण बनवीर का राजतिलक अभी तक रुका हुआ है।

रणजीत—और इसी के कारण मेरे लिये प्रधान मंत्री का पद रिक्त नहीं है।

शीतलसेनी—एक काम करोगे रणजीत!

रणजीत—हाँ-हाँ, मैं समझ गया।

शीतलसेनी—तो जाओ, बूढ़ा अभी अपने महलों तक नहीं पहुँचा होगा।

रणजीत—मैं रास्ते ही में उसको समाप्त कर दूँगा।

[कटार निकालता है।]

शीतलसेनी—बिजली की गति से जाओ।

[दोनो का एक दूसरी ओर से प्रस्थान ।]

पट-परिवर्तन

तृतीय दृश्य

अरवली की घाटी

[डूँगरपुर के राजा ईशकर्ण अपने सेना-
पति के साथ आखेट से लौटकर आते हैं ।]

ईशकर्ण—आखेट खेलते-खेलते तुम मुझसे अधिक थक गए हो, सेनापति ! आओ, कुछ क्षण इस छाया में विश्राम करें, और अरवली की इस प्राकृतिक छटा का निरीक्षण करें।

[दोनों एक वृक्ष की छाया में बैठते हैं ।]

सेनापति—चित्तौड़ से आपके लिये महाराना बनवीर के राजतिलक का निमंत्रण आया है।

ईशकर्ण—हाँ, उसमें अवश्य ही सम्मिलित होना पड़ेगा, सेनापति ! तुमने चित्तौड़ का नवीन समाचार नहीं सुना ? वृद्ध सरदार कर्मचंदजी की भी हत्या हो गई है। उनका शव रक्त से रँगा हुआ सड़क के किनारे पड़ा हुआ मिला। वधिक का कुछ भी पता नहीं है।

सेनापति—उनका कोई भी शत्रु न था, क्योंकि वह सबको चाहते थे। राजा और रंक सभी उनका समान भाव से आदर करते थे, ऐसे न्याय-निष्ठ और वीर सरदार की मृत्यु राजस्थान के दुःख का कारण है।

ईशकर्ण—कोई-कोई समझते हैं, सरदार ने राजवंश का अंत देखकर आत्महत्या कर ली। हाँ, और कुछ लोग काना-फूसी करते हैं कि उन्हें महाराना बनवीर ने मरवा डाला।

सेनापति—किसलिये ?

ईशकर्ण—कदाचित् नए महाराना का मन उस पुराने सरदार से न मिला हो। जाने भी दें, हमारा इससे क्या बनता और बिगड़ता है। यह डूँगरपुर का राजा पहले विक्रम का अनुचर था, अब बनवीर के अधीन हुआ। किंतु महाराना बनवीर ने हमें बड़ी आशा दिलाई है।

[पन्ना और उदय का उदास भाव से गाते हुए प्रवेश।]

सोहनी—तीन ताल

चलत-चलत हारे।
विकट विपिन में दुख के मारे।

[१]

दिन में छानी धूलि राह की,
रात बिहानी गिन-गिन तारे ;
जग की आशा छोड़ जगतपति !
आए शरण तुम्हारे।

[उदय के बाएँ पैर के अँगूठे में ठोकर लगती है। पन्ना गाते-गाते अपनी चादर का एक सिरा फाड़कर अँगूठा बाँध देती है।]

[२]

कर्णधार बिन फँसे भँवर में,

नाथ, लगा दो नाव किनारे ;

छूटे अनेकों के भय तुमने,

तुमने कितने पार उतारे ।

पन्ना—वन-वन भटकते हुए तुम्हारा मुख पीला पड़ गया। तुम्हारे वस्त्र मलीन हो गए, फट गए। तुम बहुत थक गए लाल ! तुम्हें पीठ पर ले चलूँगी, अब डूँगरपुर निकट ही है।

उदय—नहीं, मा ! तुमने कल से खाया ही नहीं है। मैं पैदल ही चलूँगा।

पन्ना—अगणित दीन-दुखियों के शरण, हिंदू-सूर्य बप्पा-राव के वंशज के लिये कहीं स्थान नहीं, हा भगवान् !

उदय—इस पेड़ की छाया में कुछ देर विश्राम कर चलें।

[जहाँ पर ईशकर्ण और उसके सेना-
पति बैठे थे, उधर संकेत करता है।]

पन्ना—[उधर देखकर] हैं, ये कौन ? वेश-भूषा से निश्चय ही कोई राजवंशी प्रतीत होते हैं। इनका परिचय प्राप्त करूँगी। [उधर बढ़ती है।]

ईशकर्ण—[सेनापति के साथ उठकर] इस निर्जन पथ पर दुख की सताई तुम कौन हो ?

पन्ना—रक्षा ! रक्षा ! मैं एक भिखारिन हूँ। क्या श्रीमान् का परिचय पा सकती हूँ ? [घुटने टेकती है।]

सेनापति—तू डूँगरपुराधीश के समीप बैठी है।

पन्ना—मेरा अहो भाग्य है। मैं आप ही की सेवा में उपस्थित होने जा रही थी। आपने पथ में ही दर्शन दिए।

ईशकर्ण—यह कौन, तेरा पुत्र है?

पन्ना—हाँ, मेरा पुत्र है, पुत्र भी जिस पर निछावर कर दिया जा सके, वह है। इसकी रक्षा कीजिए, महाराज! यह किसी दिन आपको इसका बदला देगा।

ईशकर्ण—[सेनापति से।] भिखारिन का बेटा कैसा बदला देगा? यह स्त्री पागल तो नहीं?

पन्ना—इसके पिता ने बार-बार आपकी सहायता की है, इसे अपने महल में ले जाकर इसका पालन-पोषण कीजिए, महाराज!

सेनापति—और सुनिए। यह अब टुकड़े खाना पसंद नहीं करता, राजमहल में प्रतिपालित होना चाहता है।

ईशकर्ण—क्यों, किसलिये?

पन्ना—इसलिये कि यह आपके स्वामी संग्रामसिंह का पुत्र—

उदय—[पन्ना की उँगली खींचकर बाधा देता है, और उसे एक ओर ले जाकर कहता है।] चुप रहो मा! इनके हृदय में दया नहीं है, इन्हें अपना भेद न दो। चलो, हम सिंह की माँद में आश्रय खोजेंगे, कदाचित् वह हमारी रक्षा करे।

ईशकर्ण—क्या कहा! यह संग्रामसिंह का पुत्र है? ठीक है, बिलकुल सच है, किंतु इसे तो किसी ने मार डाला था।

पन्ना—किसी ने मार डाला था, पर मैंने जिला दिया।

ईशकर्ण—इससे यह प्रकट होता है, तेरे पास अमृत भी है।

सेनापति—और भिखारी के बेटे को राजकुमार बना देने की विद्या भी।

ईशकर्ण—चलें सेनापति! राजधानी अभी दूर ही है। नहीं तो इसकी बातों में हम अपना कुछ समय देकर अवश्य मनोरंजन करते।

पन्ना—क्या मैं निराश हो जाऊँ महाराज?

सेनापति—दूर हो पगली! फिर कभी राजधानी में आना।

[ईशकर्ण और सेनापति का जाना।]

उदय—धाई-मा! अब कहाँ चलोगी? देवलराज की शरण में गईं, वह बनवीर से डर गए। डूँगरपुर के राजा तुम्हें पागल समझते हैं। अब इस अरवली की किसी एक ही घाटी में हमारी सारी आशाएँ केंद्रीभूत हो जायँ, मा! हम और कहीं न जायँ। राजमुकुट की आशा छोड़ दो, उसमें क्या विशेषता है? हम वनवासी होकर कंद-मूल खायँ, और उसी में जीवन के सुख को खोजें।

पन्ना—नहीं-नहीं, ऐसा उच्चारण न करो, मेरे प्राण! अभी यह राजस्थान राना साँगा के ऋणग्रस्तों से पटा हुआ है। किसी के हृदय में तो करुणा जाग उठेगी। कमलमीर के अधिपति आशाशाह, वह धर्म की टेक रखते हैं, उन्होंने सदा तुम्हारे पिताजी का साथ दिया। वह आज अवश्य तुम्हारी रक्षा करेंगे।

उदय—कमलमीर बहुत दूर होगा। मा! अब नहीं चला जाता। मुझे बड़ी देर से प्यास लगी है।

पन्ना—मैं धीरे-धीरे तुम्हें गोद में ले चलूँगी। तुम सावधानी से यहीं बैठे रहो, मैं अभी जल खोजकर लाती हूँ।

[पन्ना का जाना, कुछ तांत्रिकों का आना।]

तांत्रिक नं० १—पकड़ लो, पकड़ लो।

तांत्रिक नं० २—यही है।

[उदय के पास जाकर दो तांत्रिक उसके दोनो हाथ पकड़ लेते हैं।]

उदय—मुझे पकड़कर क्या करोगे?

तांत्रिक नं० १—चलो, वहीं ज्ञात हो जायगा।

उदय—छोड़ दो। छोड़ दो। मेरे पास इस सोने के तावीज़ के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।

तांत्रिक नं० २—हमें यह नहीं चाहिए, तेरी ही आवश्यकता है।

उदय—मुझे बड़ी प्यास लगी है, मेरी मा जल लेने गई है। मुझे पानी पी लेने दो।

तांत्रिक नं० १—चलो, वहीं पिलाएँगे। हमारे सरदार को तुम्हारी आवश्यकता है।

उदय—किसलिये?

तांत्रिक नं २—तुम्हें काली की भेंट चढ़ाया जायगा। सरदार ने सपना देखा है, माता बड़ी भूखी हो गई है।

उदय—वह मेरी शक्ति से तृप्त हो। मैं भी यही खोज रहा था, पर मुझे मेरी माता से विदा हो लेने दो। वह आती ही होगी, एक क्षण ठहरो।

तांत्रिक नं० १—नहीं-नहीं, हमें ऐसी आज्ञा नहीं है।

[तांत्रिक उदय को पकड़ ले जाते हैं। दूसरी ओर से दोने में जल लेकर पन्ना का प्रवेश।]

पन्ना—[उदय को न पाकर इधर-उधर देखकर] हैं! कहाँ? किधर? इसी पेड़ की छाया में तो वह बैठा था। उसने कभी मेरी अवज्ञा नहीं की। [पुकारती है।] उदय! उदय!!... उदय!!! [उत्तर न मिलने से अधिक चिंतित होती है, जल का दोना हाथ से पृथ्वी पर छूट जाता है।] हा भगवान्! उत्तर नहीं देता? कहाँ चला गया? क्या किसी हिंसक जीव का ग्रास तो नहीं हो गया? [पृथ्वी में कुछ पद-चिह्न देखकर] कुछ मनुष्यों के पद-चिह्न धूलि में अंकित हैं, उनके बीच में उदय के सुकुमार और नंगे पैर का साँचा भी है। उसके बाएँ अँगूठे में ठेस लग जाने के कारण मैंने कपड़ा बाँध दिया था, वह भी छिपा नहीं है। उसे कोई पकड़ ले गए। इधर को गए हैं। मैं इन्हीं का अनुसरण करूँगी।

[पदांकों का अनुसरण करते हुए पन्ना पृथ्वी को देखती हुई जाती है।]

पट-परिवर्तन

चतुर्थ दृश्य

वनवीर का दरबार

[सिंहासन पर वनवीर, प्रधान मंत्री का आसन रिक्त, रणजीत, छुंदावत आदि सरदार अपने-अपने आसनों पर सुशोभित, एक ओर राजमुकुट लिए शीतलसेनी, दूसरी ओर पूजा-सामग्री लिए राजगुरु, दोनो ओर द्वारपाल ।]

वनवीर—मेवाड़ के शुभचिंतक सभी राजाओं तथा सरदारों ने इस राजतिलक की सभा में पधारकर उसकी शोभा को बढ़ाया है। आपकी उपस्थिति से यह भी प्रकट है कि आप मेरे साथ ही हैं। प्रजा में न्याय और व्यवस्था फैलाने के लिये ही मेरे सिर पर राजमुकुट रक्खा गया है। आप लोग मुझे सहायता दें कि वह कर्तव्य पूर्ण हो। अवश्य ही मेवाड़ की शांति के लिये मुझे कटार भी लेनी पड़ी। पर वह अनिवार्य थी। मैं सब बातों से संतुष्ट हूँ, किंतु हमारे प्रधान सरदार कर्मचंद का आसन शून्य है, इसी का मुझे खेद है।

छुंदावत सरदार—राव कर्मचंद के पुत्र जयसिंह अपने पिता के शून्य आसन के योग्य अधिकारी हैं। विद्या-बल, न्याय-नीति और रण-कौशल में उन्हीं के समान हैं। यह आसन क्यों न उन्हीं का हो ?

बनवीर—मेरा भी यही निश्चय है। राज्य के इस परिवर्तन के वही आदि कारण हैं। पर इधर उनकी उदासीनता विस्मय-जनक है।

शीतलसेनी—उनके लिये सबसे पहले इस राजतिलक का निमंत्रण भेजा गया था। पर वह अभी तक नहीं आए।

रणजीत—मैं जयसिंह को मंत्री-पद देने के बिलकुल ही विरुद्ध हूँ, क्योंकि उनकी समवेदना महाराना बनवीर के साथ अब कुछ भी नहीं है। उन्हें यह आसन न दिया जाना चाहिए, वह स्वयं भी इसे न लेंगे।

शीतलसेनी—उनके न लेने पर अवश्य ही यह किसी दूसरे अधिकारी का हो।

रणजीत—[स्वगत] वह अधिकारी श्रीमान् रणजीत हैं।

छंदावत सरदार—अवश्य ही जयसिंह अपने पिता कर्मचंद के उस एकाएक वध से व्याकुल हो गए हैं।

बनवीर—किंतु बनवीर ने उन्हें नहीं मारा।

[नेपथ्य में घंटा-शंख के नाद के बाद सुमधुर वाद्य-ध्वनि होती है।]

राजगुरु—राजतिलक का शुभ मुहूर्त आकर उपस्थित हुआ। तिलक कीजिए महाराज !

बनवीर—मैं प्रस्तुत हूँ।

[राजगुरु बनवीर का तिलक करते हैं। शीतलसेनी मुकुट पहनाती है।]

शीतलसेनी—गाओ, गाओ, विद्याधरियो ! मेवाड़ के नए महाराज के लिये मंगल-गीत गाओ।

[विद्याधरियाँ ज्यों ही आकर गीत आरंभ करती हैं, त्यों ही जयसिंह वेग-पूर्वक आकर उनके गीत में बाधा पहुँचाता है ।]

जयसिंह—किंतु सावधान ! अभी ठहरो, मुझे इस उत्सव को अमंगल से परिपूर्ण कर लेने दो।

छंदावत—कौन, सरदार जयसिंह ?

जयसिंह—हाँ, अभागा जयसिंह, जिसके वृद्ध पिता की तुमने धोखे से हत्या की।

शीतलसेनी हमने हत्या नहीं की, सरदार महोदय ! हमने उनके शून्य आसन के लिये तुम्हें ही नियुक्त किया है।

बनवीर—वह आसन मेरे सबसे निकट है। आओ, आओ भाई ! उस पर सुशोभित होकर मेवाड़ के मनुष्य-मात्र के मंगल के लिये मुझे मंत्रणा दो।

जयसिंह—चुप रहो हत्यारो ! तुम मेरे मन को अपना सिंहासन देकर भी क्रय नहीं कर सकते। तुमने निर्दोष रक्त की तीन नदियाँ बहाई हैं, मैं उसी रक्त को छिड़ककर तुम्हें और तुम्हारे इस उत्सव को कलंकित करूँगा।

रणजीत—सावधान, सरदार ! पिता के शोक में तुम्हारा मस्तिष्क ठीक-ठीक काम नहीं कर रहा है। शांति से काम

हो। तुम्हारे मुख से राजसभा में कहने योग्य शब्द नहीं निकल रहे हैं। सावधान होओ!

जगसिंह—चुप रहो, रणजीत! मैं तुम्हें भी खूब अच्छी तरह जानता हूँ।

वनवीर—मैं तुम्हें सचेत करता हूँ। जीवन का भय करो।

जगसिंह—जीवन का भय? नहीं, तिल-भर नहीं। किसके लिये? उदय का मुख देखकर विक्रम-वध भूला जा सकता था, पिता की सेवा कर उदय की हत्या भी विस्मृत हो जाती, पर तुमने मेरे जीने के लिये कुछ भी नहीं छोड़ा। [तलवार निकालकर] तुम तलवार का भय दिखाते हो, वनवीर! तुम घातक हो, तुम मेरा सामना नहीं कर सकते। मैं बँधे हुए महाराना विक्रम नहीं हूँ, सोता हुआ बच्चा उदय नहीं हूँ, अकेले राह चलते हुए वृद्ध सरदार कर्मचंद नहीं हूँ। मैं तेरे ऐसे राज्यारोहण की तृष्णा को धिक्कारता हूँ। तेरे मेवाड़ का इस तलवार के साथ त्याग करता हूँ। [तलवार फेंक देता है।] जब तक जीता रहूँगा, तेरे इस पाप-राज्य की कथा को आर्यावर्त के कोने-कोने में पहुँचा दूँगा। बप्पा रावल के पवित्र वंश का नाश करनेवाले, तेरा अंत हो!

[सवेग प्रस्थान।]

रणजीत—यह निस्संदेह पागल हो गया है। हम सब चुप ही रहे, यही उचित भी था। जाने दो, बला ऐसे ही टल गई।

शीतलसेनी—बकने भी दो उसे। उसके कहने से होता ही

क्या है ? विद्याधरियो ! तुम भी चुप हो गईं ? अपने सुमधुर गीत से राजसभा में हर्ष की प्रतिध्वनि करो।

[विद्याधरियाँ गाती हैं।]

पहाड़ी खम्माच—दादरा

आज राजतिलक की गाओ बधाई।
प्रकटा सुख दुरित हुई दुख की परछाई।

[१]

जब तक रवि की रश्मियाँ आलोक प्रकाशें,
कलियों में सुमन मन में भव्य भाव विकासें,
तब तक हो शत्रु-हीन यह संसार आपका,
सुख-शांति-श्री से पूर्ण हो भांडार आपका।
हो कीर्ति का प्रकाश,
भवन में,
भुवन में,
गगन में,
सुख-सौभाग्य की घड़ी आई।
आज राजतिलक की गाओ बधाई।

दृश्य-परिवर्तन

पंचम दृश्य

गुफा में काली की विशाल मूर्ति के समीप

[तांत्रिकों का अड्डा । रक्त-वस्त्र गुरु बहादुरसिंह मूर्ति की आरती उतार रहा है । उदय का सिर यूप-काष्ठ से बँधा है, उनके ऊपर वधिक नंगी तलवार लिए सरदार की आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहा है । इधर-उधर और भी अनेक तांत्रिक हैं । सब गाते हैं ।]

केदार—तीन ताल

सब—जय-जय काली, श्मशान-वासिनि !
पाप-विनाशिनि ! पुण्य-प्रकाशिनि !

[१]

रिपु-मस्तक हत करनेवाली,
भक्तों का भय हरनेवाली !
डरनेवाली ;नहीं काल से,
महाकाल की वक्ष-विहारिणि !

[२]

उदय—दुःखों से पीड़ित हुई, व्याकुल संतान,
दयावती जननी नहीं क्या तुमको कुछ ध्यान ?

[३]

सब—लोक-प्रसिद्ध कीर्ति है तेरी,
ऋद्धि-सिद्धि चरणों की चेरी।
खरतर असि सँभाल ले कर में,
उठ मा जाग, जाग संहारिणि !

उदय—हाय ! क्या तुम सब मेरा ही वध करोगे ? क्या मैंने संसार-भर का अपराध किया है ?

बहादुरसिंह—निस्संदेह, तुम्हारे रक्त से काली माई की प्यास बुझेगी, और देश की अवृष्टि दूर होगी। मा बहुत दिनों से प्यासी है।

उदय—नहीं-नहीं, मेरे रक्त की एक बूँद भी यह पत्थर की मा न सोख सकेगी। उसकी प्रत्येक धार इस कठोर धरती पर तुम्हारी पाप-कथा को अंकित कर सूख जायगी। छोड़ दो, मुझे छोड़ दो, राक्षसो !

बहादुरसिंह—हमें राक्षस न समझो। तुम्हारी बलि में हमारा कोई भी स्वार्थ छिपा हुआ नहीं है। वीर बालक, मृत्यु का भय छोड़ दो, तुम स्वर्ग में निवास करोगे। तुम्हारे मरने से अनेक जीवित रहेंगे। वधिक ! तुम तैयार हो ?

वधिक—हाँ, महाराज !

उदय—ठहर जा, केवल एक क्षण ठहर जा। अरे वध की आज्ञा देनेवाले अधर ! मुझे अंतिम बार कुछ कहना है।

बहादुरसिंह—पन्ना ! पन्ना !

[पृष्ठ ६८]

तृतीय अंक
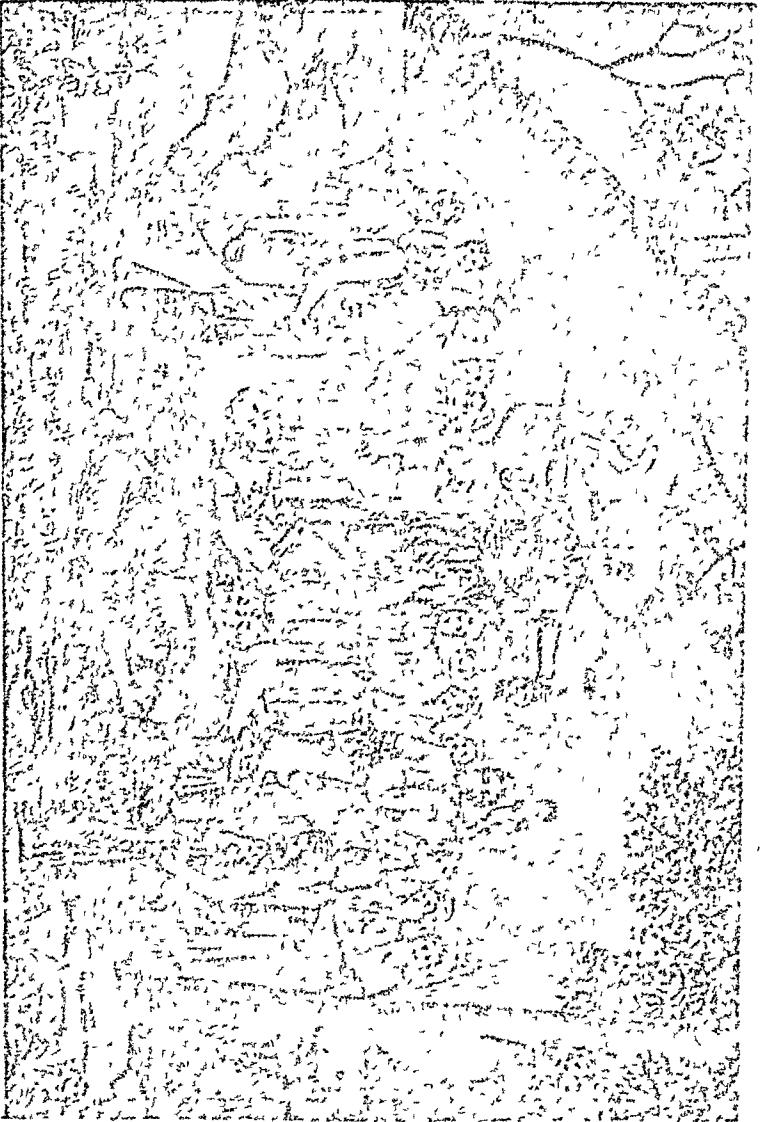
प्रथम दृश्य

कमलमीर का दरबार

[कमलमीर के अधिपति अपने एक मंत्री के साथ बातें कर रहे हैं। द्वारपाल का आना।]

द्वारपाल—[प्रणाम कर] कमलमीर के स्वामी की जय हो! एक बालक और एक बूढ़े के साथ एक दुखिया द्वार पर खड़ी है। श्रीमान् को अपने दुःख की कथा सुनाने के लिये दरबार में प्रवेश चाहती है। आज्ञा मिले।

आशाशाह—हाँ, दुखिया के लिये द्वार खुला ही रहे, द्वारपाल! वह प्रवेश प्राप्त करे।

[द्वारपाल का जाना। आशाशाह और मंत्री फिर बातें करते हैं। पन्ना, बहादुरसिंह और उदय का प्रवेश।]

तीनों—जय हो, कमलमीर के अधिपति की जय हो!

आशाशाह—कौन? तुम यहाँ किसलिये आए हो?

पन्ना—सब कुछ कहूँगी रावसाहब! किंतु—[मंत्री की ओर देखकर कुछ कहने में हिचकिचाती है।]

आशाशाह—[पन्ना के अभिप्राय को समझकर।] अच्छी बात है, आप अब इस समय जा सकते हैं। मैं इसकी बातें सुनना चाहता हूँ।

मंत्री—जो आज्ञा। [अभिवादन कर प्रस्थान।]

आशाशाह—हाँ, कहो, तुम क्या चाहती हो?

पन्ना—शरण चाहती हूँ, रायसाहब! आज समस्त मेवाड़ में उसके स्वामी के लिये स्थान नहीं है। [बहादुरसिंह कुछ चकित होता है।]

आशाशाह—यह मेवाड़ का स्वामी कौन? यदि तुम्हें पागल न समझें, तो तुम्हारी बातें रहस्य से भरी हैं! स्पष्ट कहो, तुम क्या चाहती हो?

पन्ना—[उदय को सामने कर] यह महाराना संग्रामसिंह का सबसे छोटा बेटा उदयसिंह है। [बहादुरसिंह सिर से पैर तक काँपकर स्तंभित रह जाता है।] मैं इसकी धाई हूँ, मैं इसे हत्यारे बनवीर के छुरे से बचा लाई हूँ। इसे शरण दो, इसकी रक्षा करो।

बहादुरसिंह—तुम यह एक ही साँस में क्या कह गईं पन्ना! [उदास भाव से] चंदन कहाँ है? यह राजकुमर उदय है?

पन्ना—हाँ, यही राजकुमार उदय है।

आशाशाह—किंतु उसकी तो बनवीर द्वारा की गई हत्या लोक में प्रसिद्ध हुई है। तुम किस तरह राजकुमार को बचा लाई हो?

पन्ना—अपने बेटे को खोकर।

बहादुरसिंह—[उत्सुक होकर] किसे? चंदन को?

पन्ना—[उदास स्वर में] हाँ, चंदन ही को। [बहादुरसिंह हतोत्साह हो जाता है।] मुझे हत्यारे की इच्छा ज्ञात हो गई थी। बनवीर के आने से पहले ही मैंने उसे उदय की सेज पर सुला दिया। जिसके लिये मैंने अपने बेटे की बलि दी है, उसी के लिये आप इसकी रक्षा करें।

बहादुरसिंह—तुम क्या यही सब कहने के लिये मुझे राज-दरबार में लाई हो? तुमने अब तक मुझसे इस भेद को छिपाया, तुम इसे गुप्त ही क्यों न रख सकीं? तुम क्यों कहती हो कि यह चंदन नहीं है?

पन्ना—तो क्या तुम चाहते हो कि चित्तौड़ का पवित्र राज-वंश समाप्त हो जाय? नहीं-नहीं, सेवा को स्वर्गीय करने के लिये स्वामी की भी प्रतिष्ठा होगी। उसके लिये बलिदान भी करना पड़ेगा।

बहादुरसिंह—संसार और समाज को तिरस्कृत कर मैं निर्जन गुफाओं के अंधकार में किसी का अनुसंधान कर रहा था। बहुत दिन बाद इस राजकुमार का मुख दिखाई दिया, तुमने बतलाया कि यह पुत्र है।

पन्ना—और आप भी स्वयं मन में निर्णय करें कि स्वामी के लिये अपने पुत्र को न्योछावर कर देना क्या पाप है? चंदन खो नहीं गया, इस अनंत नील आकाश में वह भी एक नक्षत्र

है । आप इसी को चंदन समझें, यह भी अपने को संसार में चंदन ही प्रकट करता है ।

बहादुरसिंह—तुमने पुत्र की मरीचिका दिखाकर मुझे फिर ऐसे माया-भरे संसार में छोड़ दिया !

पन्ना—[आशाशाह से] इस रहस्य को हमारे सिवा केवल एक राजमहल का बारी और जानता है । उसने इसे गुप्त रखने की प्रतिज्ञा की है । आशा है, आप भी इसे प्रकट न करेंगे ।

बहादुरसिंह—क्यों, ऐसा ही मुझे भी करना होगा क्या ?

पन्ना—हाँ; जब आप इसे चंदन ही समझेंगे, तो यह भेद स्वयं ही अप्रकट रहेगा ।

आशाशाह—हम तुम्हारे इस रहस्य को सावधानी से गुप्त ही रक्खेंगे । तुमने स्वामिभक्ति का मूल्य बहुत बड़ी वस्तु से दिया, इसमें हमें कुछ भी संदेह नहीं है, किंतु तुम जानती ही हो, महाराना बनवीर की प्रभुता के समीप कमलमीर के अधिपति की कुछ भी गणना नहीं है । तुम्हीं कहो, दुर्बल आशाशाह किस तरह उनके शत्रु को आश्रय दे सकता है ? महाराना बनवीर को यह ज्ञात होने पर आशाशाह का मुँह कहाँ गिरेगा, मैं भले प्रकार जानता हूँ ।

पन्ना—मुझे शरण दो, मैं बड़ी आशा से आपके पास आई हूँ । क्या आप इतने कायर हैं ? वधिक का ऐसा प्रताप है ? मुझे निराश न करो रावजी !

आशाशाह—मैं अपनी दुर्बलता प्रकट कर चुका हूँ ।

पन्ना—सत्य का पक्ष न छोड़ें, महाराज ! संग्रामसिंह आपके भी स्वामी थे।

आशाशाह—निस्संदेह, संग्रामसिंह ने मुझ पर अनेक उपकार किए हैं।

[आशाशाह की माताजी का प्रवेश।]

माताजी—और तुम भूल गए हो क्या ? एक बार युद्ध में तुम्हारी प्राण रक्षा कर अपने शरीर के नब्बे घावों में एक घाव और जोड़ा था। ऐसे उपकारी स्वामी की सेवा करनी ही पड़ेगी, पुत्र ! [पन्ना से] मैंने ओट से तुम्हारी सब बातें सुन ली हैं, बहन ! मैं अपनी इच्छा से तुम्हारे इस भेद में सम्मिलित होने आई हूँ।

पन्ना—राजमाता के अनुग्रह की ऋणी रहूँगी।

माताजी—इन्हें शरण दो, बेटा। इनकी देख-रेख का सारा भार मैं लेती हूँ।

आशाशाह—यह तुम्हारा अनुरोध है, मा ! तो अत्यंत गुप्त रखना पड़ेगा। काशी में जो मेरी बहन रहती हैं, उनका लड़का इतना ही बड़ा है। बाहर के लोगों पर यही प्रकट किया जाय कि यह हमारा भानजा है।

माताजी—ऐसा ही हो, डर की कोई बात नहीं है।

आशाशाह—नहीं मा ! ऐसा न समझो। इस भेद का तिल-भर भी आभास मिलने पर बनवीर अपने चारो ओर गुप्त-चरों को फैला देगा।

बहादुरसिंह—चिन्ता न कीजिए माताजी ! इस, बालक के प्राण का चौकीदार मैं रहूँगा । आप कुछ भी भय न करें, मैं इनको नकली राजकुमार का साथी बनूँगा, और इस भेद को प्रकट न होने दूँगा । मेरा वह प्यारा दास संग्रामसिंह के लिये मर चुका, यह जोरावर मेरा भाई और संग्रामसिंह के पुत्र की रक्षा के लिये प्रस्तुत है । मैं अभी तक इसी भ्रांति में था कि यह मेरा बेटा है, मैं इसी भ्रम को सत्य समझकर इसे अपना बेटा ही समझता रहूँगा ।

माताजी—जाओ राजकुमार ! तुम्हारा स्वागत है ।

पन्ना—आपने सत्य का साथ दिया है, आपकी जय हो ।

उदय—धाई-मा ! तुम नहीं रहोगी ?

पन्ना—हाँ, यहीं रहूँगी । केवल एक बार चित्तौड़गढ़ जाकर अपनी आवश्यक वस्तुएँ ले आती हूँ । अब मैं निश्चिन्त हूँ । अब मुझे और भी दूसरी वस्तुओं पर ध्यान देना है । बनवीर की शंका भी दूर होगी, और मेरा काम भी हो जायगा । मैं आज ही अभी जाऊँगी ।

बहादुरसिंह—मैं तुम्हारी सेवा में रहूँगा राजकुमार !

[पन्ना का चित्तौड़ की ओर बहादुरसिंह का उदय के पास जाना ।]

अगले महल का परदा गिरता है ।

द्वितीय दृश्य

बनवीर का महल

[उत्तेजित बनवीर के पीछे छंदावत सरदार का प्रवेश ।]

बनवीर—छंदावत सरदार ! तुम सदैव राजभक्त रहे हो । आज तुम्हारा ऐसा दुस्साहस ! तुमने मेरे हाथ का दिया हुआ भोजन का दोना स्वीकार नहीं किया ?

छंदावत सरदार—तो इससे क्या हानि हुई ?

बनवीर—तुम्हें यदि यही स्वीकृत था, तो तुम सहभोज में सम्मिलित ही क्यों हुए थे ?

छंदावत सरदार—मुझे धोखा देकर निमंत्रित किया गया था।

बनवीर—समस्त सरदारों के बीच में मेरा अपमान हुआ है । घाव भर जाता है, सरदार ! अपमान की आग भीतर-ही-भीतर सुलगती रहती है ।

छंदावत सरदार—महाराना के आदर की तृष्णा न-जाने कुछ ही दिनों से क्यों इतनी बढ़ गई ? मान की लालसा जितनी ही प्रबल है, झुके मस्तक उतने ही ऊँचे दिखाई देते हैं ।

बनवीर—फिर ऐसा क्यों है ? चित्तौड़ेश्वर का दिया हुआ दोना तुमने क्यों नहीं स्वीकार किया ?

छंदावत सरदार—चित्तौड़ेश्वर ? [कुछ विश्राम लेकर] नहीं, आपको दोना देने का कुछ भी अधिकार नहीं है। परमेश्वर न करे, यदि गुजरात का सुलतान फिर चित्तौड़ पर अधिकार कर ले, तो क्या हम उसका दिया हुआ दोना स्वीकार करेंगे ? कदापि नहीं। बप्पाराव के शुद्ध वंशज के अतिरिक्त और किसी को इसका अधिकार नहीं है।

वनवीर—क्या मैं राना साँगा के भाई, युद्ध-केसरी पृथ्वीराज का पुत्र नहीं हूँ ?

छंदावत सरदार—क्या मुझे भी कुछ और स्पष्ट कहना पड़ेगा ?

वनवीर—तुम्हारे शब्द मेरी शुद्धि और गौरव पर संशय करते हैं। यह मुझे असह्य है। मैं तुम्हें देख लूँगा।

छंदावत सरदार—मुझे देखने से पहले किसी और से सामना करना पड़ेगा। आप कौन-सा स्वप्न देख रहे हैं ? क्या आपको कमलमीर के समाचार नहीं मिले ?

वनवीर—[चिंतित होकर] कमलमीर के क्या समाचार हैं ?

छंदावत सरदार—चित्तौड़ के वर्तमान महाराना के लिये बहुत ही बुरे। आपने जिस वंश में आग लगाकर समझ लिया था कि सब समाप्ति हो गई है, उसी वंश का दीपक कमलमीर के महलों में उजाला कर रहा है।

वनवीर—अर्थात् ?

छंदावत सरदार—उदय जीवित ही है।

वनवीर—[कंपित होकर] जीवित ही है ?

छंदावत सरदार—हाँ, और इससे भी बुरा समाचार यह है कि मेवाड़ के प्रमुख सरदारों ने उसकी सहायता करनी निश्चय की है।

बनवीर—तो अधिक-से-अधिक क्या होगा? वे सब मिलकर चित्तौड़ पर चढ़ाई करेंगे। किंतु मैं तुम्हारी बात का विश्वास ही क्यों करूँगा? मैंने उदय को अपने हाथ से मारा है, उसकी वह अंत-समय की चीत्कार मुझे अब भी याद है।

छंदावत सरदार— आप भ्रम में पड़े हैं। वह उदय न था।

बनवीर—फिर कौन था?

छंदावत सरदार—धाई पन्ना का बेटा चंदन। राजदूत मेरी बातों को प्रमाणित कर देगा। मैं भी जाता हूँ। [जाना चाहता है।]

बनवीर—ठहरो, कहाँ जाते हो?

छंदावत सरदार—यदि आपका भय न होगा, तो कमलमीर ही जाऊँगा। चित्तौड़ के सिंहासन का सच्चा स्वामी वहीं है।

[छंदावत सरदार का जाना। दूसरी ओर
से शीतलसेनी का आना।]

शीतलसेनी—तक्षक बच गया, बेटा! जिसे तुमने कुचला, वह केवल रस्सी थी।

बनवीर—हाँ, मैंने अभी-अभी सब कुछ सुन लिया। मैं भ्रमित था, साँच को झूठ से भिन्न न कर सका।

[रणजीत का आना।]

रणजीत—छंदावत सरदार विद्रोही हो गया है। वह राज-

पथ पर, प्रजा में यह कहा है कि तुम्हारा स्वर्गीय स्वामी अभी जीवित ही है।

बनवीर—उसे जीवित होने दो, रणजीत! वह कर क्या सकता है?

रणजीत—यह जीवित हो नहीं सकता महाराज! यह अवश्य ही चित्तौड़ के विद्रोही सरदारों की माया है। उन्होंने कहा है कि झूठे उदय की कथा से न-जाने किस मिट्टी के पुतले में उदय के प्राण फूँक दिए हैं। वह कदापि उदय नहीं है।

बनवीर—कुछ भी हो, महाराणा बनवीर को किसका भय है? मैं केवल अपने बाहु-बल से इन सबका सामना करूँगा। इस पर भी मेरे पास प्रचुर सेना है। मैंने समय पर उसका वेतन दिया है। वह मेरे लिये मरने का दम भरती है। अभी राजसभा एकत्र हो। चलो, इस पर वहीं विचार होगा।

[बनवीर और रणजीत का जाना।]

शीतलसेनी—रणजीत का अनुमान झूठा है। वह उदय ही है, कोई और नहीं। राक्षसी पन्ना ने न-जाने संसार के किस सुख के लिये अपने बेटे को निगल लिया? वैरी का बच्चा बच गया। नहीं-नहीं उसे बचना न होगा। मैं स्वयं कमलमीर जाकर उसे इस बार समाप्त कर डालूँगी। रणजीत से भी कुछ न होगा, मैं वेश भी बदल लूँगी, मेरा ऐसा भी साहस है।

[जाना।]

अगले रास्ते का परदा गिरता है।

तृतीय दृश्य

कमलमीर का राजपथ

[नेपथ्य में भिखारी गाता है ।]

भैरवी—तीन ताल

कोई नहीं इस जग में अपना ।

[१]

सुख-वैभव है केवल छाया ,
आशा है मृगतृष्णा - माया ;
मुग्ध हुआ क्यों, क्यों है लुभाया ?
जीवन निद्रा, जग है सपना ।

[उदय और बहादुरसिंह का आना ।]

बहादुरसिंह—यह बहुत बुरी बात है, उदय ! तुम नित्य नदी-तट की सैर के लिये हठ करते हो । तुम्हें ज्ञात ही है कि यहाँ सब लोग जान गए हैं कि तुम कोई और हो ।

उदय—तो हानि क्या है ? वे यह भी समझ जायँ कि मैं महाराना संग्रामसिंह का बेटा हूँ । क्यों चाचीजी !

बहादुरसिंह—[उदय के मुख पर हाथ रखकर ।] चुपो, चुपो,

क्या कहते हो, कोई सुन लेगा। यदि बनवीर के कानों तक यह बात चली जायगी, तो कुशल न होगी।

उदय—मैं उस हत्यारे बनवीर से नहीं डरता। अब मैं पर्याप्त बलशाली हो गया हूँ। क्या आप मुझे इतने वर्षों से रण-कौशल नहीं सिखा रहे हैं? क्या मैं आपका आलसी शिष्य हूँ?

बहादुरसिंह—फिर भी राजकुमार! हमें डरना ही चाहिए। मैंने बनवीर का-सा हिंसक व्यवहार कहीं नहीं देखा। उसका मुझे बड़ा भय है। तुम अपने असली रूप में प्रकट होने के लिये क्यों इतने अधीर हो? तुम स्वयं प्रकट होते जा रहे हो। उस दिन तुमने कमलमीर-दरबार की ओर से शोणिगुरु सरदार का जिस ढंग से स्वागत किया, उसे देखकर सरदार ने चकित होकर कहा था, यह कमलमीर के राजा का भानजा कदापि नहीं है।

उदय—हाँ, इसके बाद आपको ज्ञात ही नहीं है, उन्होंने अपना यह संशय आशाशाहजी से कहा। आशाशाहजी ने उनसे कुछ भी न छिपाकर मेरा सच्चा-सच्चा परिचय दे दिया। तब शोणिगुरु सरदार ने मुझे गले से लगाकर आशीर्वाद देते हुए कहा था—बेटा, यदि पूर्वजों की गद्दी को लेने का कभी तुम्हारे मन में विचार हो, तो मुझे भी याद करना। बप्पाराव के अतीत गौरव-उद्धार के लिये मैं भी सहर्ष सहायता करूँगा।

बहादुरसिंह—सहायता की तो तुम्हें कमी न रहेगी। बप्पाराव का नाम जादू से भरा हुआ है। जिस दिन यह भेद सब पर प्रकट हो जायगा, उस दिन देखना।

उदय—प्रकट क्यों नहीं हो जाने देते, चाचाजी! मैं अब छिपे-छिपे नहीं जी सकता। मेरे पिंजरे का द्वार खोल दो, मैं स्वतंत्र होकर इस मुक्त आकाश में विचरना चाहता हूँ।

बहादुरसिंह—[भिखारी को गाते हुए आता देखकर] चुपो-चुपो, कोई आ रहा है।

[एक बूढ़े और अंधे भिखारी का गाते
हुए आना।]

[२]

कंटक बिछे हुए हैं मग में
कठिन क्लेश, दुख-ही-दुख जग में;
विरह-वियोग भरे पग-पग में
कभी तड़पना, कभी कलपना।

भिखारी—दया करो बाबा! दया करो। तीन दिन से खाया नहीं है। भगवान् के नाम पर एक रोटी! [कहते हुए भिखारी का लाठी के सहारे से जाना।]

बहादुरसिंह—धीरज धरो बेटा! वह दिन स्वयं ही निकट आ रहा है। [सुँघनी के लिये जेब में हाथ डालता है, पर डिबिया न पाकर।] किंतु असली बात तो रह गई है। मैं अपनी सुँघनी की डिबिया तट पर ही भूल आया हूँ।

उदय—मामाजी ! आपका सदैव यही उलाहना रहता है। आपकी आदत बड़ी भूलों से भर गई है। या तो आप भूलने का स्वभाव छोड़ दीजिए, या मुँ पनी का उलाहना।

चन्दनसिंह—इन दोनों में से एक कोई भी न छूटेगा। मैं भी इन्हें जब जीते-जी न छोड़ूँगा, उदय ! ये मेरे अस्तित्व के लिये आवश्यक हैं। तब यहीं खड़े-खड़े कुछ देर मेरी प्रतीक्षा करो, मैं अभी उसे खोजकर लाता हूँ।

[चन्दनसिंह का जाना। भिखारी का गाते हुए फिर आना।

[३]

श्याम - सलोना, बंशीवाला ,
ब्रज का तारा, पथ का उजाला ;
उसके गुण की लेकर माला
उसको सुमिर, उसी को जपना।

भिखारी—दया करो; दाता ! दया करो।

उदय—तुम कौन हो; बूढ़े भिखारी ! तुम सदैव दया का उपदेश देते रहते हो। मैंने तुम्हें इधर कई बार राजमहल के निकट देखा है।

भिखारी—देखा होगा बाबा ! मुझे ही कम दिखाई देता है। मेरी आँखों की ज्योति कुछ बुढ़ापे ने छीन ली, कुछ चुरा ली।

उदय—तुम्हारा नाम क्या है ?

भिखारी—कभी व्यवहार में न आने से कुछ भी याद नहीं पड़ता।

उदय—घर ?

भिखारी—भिखारी का कहाँ घर है ?

उदय—यहाँ कहाँ विश्राम करते हो ?

भिखारी—ठाकुरद्वारे के कुएँ पर जो पीपल का पेड़ है, उसके नीचे। तुम्हारी आयु बड़ी हो, मैंने परसों से कुछ भी नहीं खाया है।

उदय—करुणा तुम्हें कुछ दिया चाहती है।

भिखारी—जियो बेटा।

[जब उदय कुछ द्रव्य निकालने के लिये भीतरी जेब में हाथ डालता है, तब अंधा भिखारी छिपी कटार निकालकर उदय पर वार करना चाहता है। अचानक बहादुरसिंह आकर भिखारी का हाथ थाम लेता है। भिखारी कटार को फेंक, अपना हाथ झटका देकर छुड़ाकर भागता है। बहादुरसिंह हाथ को छोड़, उसकी दाढ़ी पकड़ उसे रोकना चाहता है, पर दाढ़ी नक़ली होने के कारण उसके हाथ में ही रह जाती है, और भिखारी भाग जाता है। बहादुरसिंह कुछ दूर तक भिखारी का पीछा करता है। उदय भूमि पर पड़ी कटार उठा लेता है।]

बहादुरसिंह—[लौटकर] भागकर भीड़ में मिल गया। क्यों देखा, उदय, कुछ समझ में आया ?

उदय—[शस्त्र छिपाकर] हाँ, यही कि आपने फिर मुझे मारने से बचा लिया; किन्तु यह आश्चर्य है, आप ठीक समय पर कैसे आ पहुँचे ?

बहादुरसिंह—इस भिखारी को मैं कई दिन से देख रहा था। यह भेदी विशेषकर तुम्हारी गति का निरीक्षण करता था। एक दिन मैंने इसे तुम्हारी ओर आँखें खोलकर ताकते देखा। मुझे उसी समय से इस पर संदेह हो गया; क्योंकि यह अपने को अंधा प्रकाशित करता था। अभी जब मैं तट से लौट रहा था, तो मैंने इसे तुम्हारे समीप सीधा खड़ा देखा। झूठे अंधे ने अपने को झूठा बूढ़ा भी सिद्ध किया। मैं द्रुत-गति से तुम्हारे पास दौड़ा हुआ आया। मेरे आते-आते इसने तुम्हें अपनी कटार का लक्ष्य बनाना चाहा। यह विफल हुआ, परमेश्वर की दया हुई।

उदय—तो क्या यह घातक बनवीर ही ने भेजा है ?

बहादुरसिंह—हाँ, जान पड़ता है, हम बहुत दिन तक तुम्हें छिपाकर न रख सके। बनवीर पर सब कुछ प्रकट हो गया।

उदय—जिससे आप मुझे छिपाना चाहते थे, वही जब जान गया है, तो अब मेरे छिपे रहने से क्या लाभ है चाचाजी ?

[पन्ना का प्रवेश।]

पन्ना—कुछ भी नहीं उदय ! अब तुम्हें बहुत दिन तक छिपा

न रहना पड़ेगा। मेवाड़ ही नहीं, समस्त राजस्थान के सरदार और सिपाही राना साँगा के पुत्र की सहायता के लिये प्रस्तुत हैं। कमलमीर के अधिपति ने सबको निमंत्रित किया है। शीघ्र ही वे लोग राजदरबार में सम्मिलित होकर तुम्हारी सहायता के लिये विचार करेंगे। उन्होंने आज ही मुझसे यह सुसमाचार कहा है। मैं तुमसे कहने के लिये, तुम्हारी खोज करती हुई, इधर आई हूँ।

उदय—तुम्हें ज्ञात ही नहीं, अभी-अभी बनवीर ने मेरे वध की दूसरी चेष्टा की थी, किंतु इस बार इन्होंने मुझे बचा लिया; अब मुझे कोई नहीं मार सकता मा!

पन्ना—[उदय को रक्षा में लेकर] परमेश्वर का धन्यवाद है। अब हम तुम्हारी और भी अधिक रक्षा करेंगे। चलो, शीघ्र महलों को चलें और जाकर उन्हें भी यह समाचार सुनावें।

[जाना चाहती है, पर नेपथ्य में बैरागी
के वेश में जयसिंह को आता देखकर]

पन्ना—कौन? यह तो राव कर्मचंद के पुत्र राव जयसिंह हैं। इनके इस बैरागी वेश की घटना से परिचित हो चुकी हूँ, किंतु सहसा पहचान नहीं पड़ते।

[जयसिंह का प्रवेश।]

जयसिंह—कौन? कौन? पन्ना! तुम यहाँ कमलमीर में कहाँ?

पन्ना—तुमसे कुछ भी न छिपाऊँगी। मैं उदय की रक्षा के लिये सात साल से मेवाड़ का त्याग कर यहाँ रहती हूँ।

जयसिंह—[साश्चर्य] समझ नहीं पड़ता, किस उदय की रक्षा के लिये ?

पन्ना—[उदय को सामने कर] इसकी। लो, पहचानो, यही उदय है।

जयसिंह—[सानंद] उदय ! उदय ! हाँ, यही उदय है। मैं स्वप्न तो नहीं देख रहा हूँ पन्ना ! तुम उदय को जीवित करने के लिये अमृत कहाँ से ले आई ?

पन्ना—यह सब घर पहुँचकर सविस्तर कहूँगी।

जयसिंह—तुम धन्य हो, मा ! मैं निरुद्देश्य संसार-मार्ग में भटक रहा था ! तुमने अपनी इस कर्तव्य-रक्षा से मुझे भी पथ दिखाया है। तुमने बप्पाराव के वंश-वृक्ष को बचा लिया। आज मेरा हृदय आनंद से परिपूर्ण है। [बहादुरसिंह की ओर संकेत कर] इन्हें कुछ-कुछ पहचान सका हूँ।

पन्ना—हाँ, यह मेरे स्वामी हैं, जो युगों से अदृश्य थे !

जयसिंह—ओहो ! बहादुरसिंहजी, मुझे याद है, यह मेरे पिता के मित्र थे। आज्ञा दो मा, घातक सिंहासन पर नहीं देखा जा सकता। यह मेरे प्रभु का पुत्र है। [उदय के मस्तक पर हाथ रखता है।] इस भिक्षा-पात्र का त्यागकर मैं फिर मेवाड़ की रक्षा के लिये तलवार हाथ में लूँगा। [भिक्षा-पात्र और माला आदि फेंक देता है। उदय उसे अपने हाथ की कटार दे देता है।]

बहादुरसिंह—तुम मेरे मित्र की योग्य संतान हो।

पन्ना—चलो, महलों को चलें, वहीं सविस्तृत समाचार ज्ञात होंगे।

उदय—चलो-चलो, मा! बहुत दिन बाद आज देवता दाहने प्रतीत होते हैं।

जयसिंह—चलो-चलो, पिता का वध भूल सकूँगा, केवल इस आनंद में कि मेवाड़ राक्षस के पंजे से मुक्त होगा!

[पहले उदय, पन्ना, फिर जयसिंह, अंत में बहादुरसिंह का सुँघनी सूँघते हुए जाना।]

परदा उठता है!

चतुर्थ दृश्य

कमलमीर का दरबार

[पन्ना, उदय, बहादुरसिंह, चूंडावत
आदि अनेक सरदारों के साथ आशाशाह
सिंहासन पर विराजमान हैं ।]

आशाशाह—कमलमीर की यह राजसभा आज राजस्थान के प्रमुख सरदारों से सुशोभित है। आप सबकी बप्पारावल के पवित्र वंश के प्रति बड़ी श्रद्धा है। आपके पूर्वजों ने बार-बार मेवाड़ के शत्रु के विरुद्ध हाथ में तलवार लेकर रण में प्राण दिए हैं। आपकी वीरता आपके त्याग से पवित्र हुई है। इस राजसभा का उद्देश्य मेवाड़-संबंधी एक विचित्र सत्य का उद्घाटन है। उसमें इस वीर बाला पन्ना का आत्मोत्सर्ग छिपा हुआ है। मा ! इधर आओ, इस आसन से हमें अपने त्याग की कथा तार-स्वर से सुनाओ कि हम भी उसे सुनकर पवित्र हों।

पन्ना—अवश्य ही सरदार महोदय ! किंतु इसलिये नहीं कि आप मेरा आदर करें, पर इस वास्ते कि उदय को उसका अधिकार प्राप्त हो। चलो उदय ।

[उदय को साथ लेकर मंच पर
चढ़ती है ।]

आशाशाह—[सिंहासन से उठकर] आओ उदय, इस क्षुद्र आसन पर पधारकर इसे अपने स्पर्श से पवित्र करो।

[उदय सिंहासन पर बैठता है। पन्ना और आशाशाह सिंहासन के दोनो ओर खड़े होते हैं।]

आशाशाह—पन्ना ! आरंभ करो।

पन्ना—यह भेद यद्यपि बहुत-कुछ खुल चुका है, तथापि बहुतों ने इस पर अविश्वास किया है। मैं इसी को सत्य प्रमाणित करूँगी। मेवाड़ के सिंहासन का शुद्ध अधिकारी यही महाराना संग्रामसिंह के बेटे उदयसिंह हैं। जिन्होंने इन्हें पहले कभी देखा है, वे पहचान सकते हैं।

[बैरागी का वेश बदलकर जयसिंह का आना।]

जयसिंह—हाँ, मैंने इन्हें देखा है। यद्यपि सात साल के अदर्शन की अवधि बीच में है, तथापि यह बहुत अच्छी तरह पहचाने जाते हैं। यही महाराना संग्रामसिंह के पुत्र महाराना उदयसिंह हैं।

पन्ना—उस रक्त की रात को मैं इन्हें एक टोकरी में छिपाकर बारी की सहायता से गढ़ के बाहर निकाल लाई। मैंने इनकी सेज पर जिसे सुला दिया था, उसी का वध कर वनवीर , उदय [illegible] नाम-रूप मिट चुका।

[illegible] चुके हैं, वह तुम्हारा पुत्र था

तुम धन्य हो, मा ! तुम्हारे त्याग से इतिहास पवित्र हुआ ।

पन्ना—आपके पवित्र निश्चय के लिये मैं और कुछ भी न कह सकूँगी । यही महाराना संग्रामसिंह का अभागा पुत्र है । इसके सिंहासन पर घातक बैठा है ।

सरदार नं० २—मैं आज ही मेवाड़ से आ रहा हूँ । मैंने उदय की रक्षा और शिक्षा के समाचार वहीं सुने । मेवाड़ के सच्चे अधिकारी के लिये मेरे प्राण भी निछावर हों ।

चूंडावत सरदार—मैं बनवीर से रुष्ट होकर आया हूँ ! मैं भी उसका सिंहासन उलटने में आपकी सहायता करूँगा । आज उसका ऐसा अभिमान है कि वह हमें अपना दिया हुआ सोना स्वीकार करने को बाध्य करता है ।

आशाशाह—आप सभी सहायता के लिये प्रस्तुत हैं, तो भविष्य के लिये क्या विचार है ?

बहादुरसिंह—इसी समय कूच के ढोल पीटे जायँ । 'महा-राना उदय की जय'—बोलते हुए चित्तौड़ पर चढ़ाई हो । मेरा एक हाथ बचा है, उसमें ढाल नहीं, तलवार दीजिए ।

आशाशाह—अनुभवी सैनिक ! तुम्हारे जीवन का अधिक भाग यद्यपि युद्ध-क्षेत्र में कटा है, तथापि तुम इतने शीघ्र कूच की सम्मति देने में कुछ भी विचार करते प्रतीत नहीं होते ।

बहादुरसिंह—मैंने विचार कर ही कहा है । आपको कदा-

चित् सेना और शस्त्रों की कमी दिखाई देती होगी, इसकी कुछ भी चिंता न कीजिए। मेवाड़वासी जो भी सुनेगा कि उदय जीवित हैं, वही इनकी सहायता के लिये हाथ में तलवार लेकर घर से निकल आवेगा। सत्य की रक्षा के लिये मेवाड़ का बच्चा-बच्चा सैनिक बन जाता है, रमणियाँ शस्त्र सँभाल चल पड़ती हैं।

जयसिंह—मैं भी यही विश्वास करता हूँ। यदि आज ही कूच करना उतावली हो, तो कल चलना उचित होगा। चढ़ाई में अब विलंब न होना चाहिए। हमें राह चलते-चलते सहायता प्राप्त होगी। मैंने समस्त राजस्थान में घूम-घूमकर बनवीर के पाप की कथा फैलाई है। उनकी समवेदना मेरे साथ थी। उदय को जीवित पाकर वे सहायता को खिंचे आवेंगे।

आशाशाह—बनवीर के सहायक कौन-कौन हैं ?

चूंडावत सरदार—मेवाड़ और उसके आस-पास के इतने सरदारों को तो मैं यहीं पर देख रहा हूँ। ये सब बनवीर से असंतुष्ट हैं। कुछ सरदार राह में हमारी संख्या बढ़ावेंगे। जो शेष रहेंगे, उनमें अवश्य ही कुछ उदासीन होंगे, तो बनवीर के लिये क्या बच रहेगा ? रह गई उसकी वेतनभुक्त सेना, उससे होता ही क्या है ?

आशाशाह—[उदय के प्रति] आप ही चित्तौड़ के महाराना हैं। चढ़ाई के संबंध में आपके क्या विचार हैं ?

उदय—[सिंहासन से उठकर] तो क्या हानि है। आज

अपने युद्ध का पथ निश्चित कर लें, और शत्रु-सेना को जाँच लें। कल प्रभात होते ही कूच हो।

आशाशाह—हमें महाराना की आज्ञा शिरोधार्य हो।

सब—जय, मेवाड़ के महाराना की जय!

[सब शस्त्र उठाकर 'जय' कहते हैं।]

अगले जंगल का पर्दा गिरता है।

पंचम दृश्य

युद्ध-क्षेत्र

[बनवीर और शीतलसेनी का आना ।]

बनवीर—तुम इस भयानक रण-क्षेत्र में क्यों चली आईं मा! मैं तीन दिन से लगातार हार ही रहा हूँ। अब केवल मुट्ठी-भर वीरों को लेकर ही मुझे युद्ध करना है। आज अवश्य ही निर्णय हो जायगा।

शीतलसेनी—निराश न होओ, विजय तुम्हारी ही होगी।

बनवीर—कभी मैं भी समझता था कि विजय मेरी ही होगी, पर वह भूल थी। विजय मेरी अब कभी न होगी, मैं इसे जानता हूँ। फिर भी लड़ूँगा, इसके अतिरिक्त और कोई उपाय ही नहीं है। क्या तुम इस समय मुझे शस्त्र छोड़, दाँतों के नीचे तृण रखकर उदयसिंह की शरण जाने का उपदेश देने आई हो? किंतु अब बहुत आगे बढ़ चुका हूँ। [नेपथ्य में रण-वाद्य] वह सुनो, यह मेरी सेना का रण-वाद्य है। वह आ पहुँची, मुझे भी चला जाना चाहिए। तुम यहाँ क्या करोगी? कुछ ही देर में भयंकर मार-काट आरंभ हो जायगी, चली जाओ।

शीतलसेनी—मैं तुम्हारे कुशल-समाचारों के लिये व्यग्र थी,

चली जाऊँगी। [बनवीर का प्रस्थान।] पर नहीं, न जाऊँगी। मेरे प्राण बनवीर के लिये बेचैन हैं। मैं यहीं रहूँगी। [एक वृक्ष को लक्ष्य कर] मैं इस वृक्ष पर चढ़कर युद्ध की गति का निरीक्षण करूँगी, और आवश्यकता पड़ने पर काम आऊँगी। [वृक्ष पर चढ़ जाती है।]

[बनवीर के नेतृत्व में बनवीर की सेना का प्रवेश और प्रस्थान। रण-वाद्य। उदयसिंह, जयसिंह, बहादुरसिंह, आशाशाह और चूंडावत सरदार का गाते हुए प्रवेश।]

उदय की सेना का गीत

वारो हे सैनिक तन, मन, धन।

(१)

रक्त-भरे इस भीषण रण में—
मोह न उपजे तेरे मन में।
नृत्यशील हो खड्ग पवन में,
धर्म के लिये हो जीवन

(२)

रिपु का तुझे न कुछ भी भय हो,
उसकी विषम शक्ति का क्षय हो।
जननी-जन्मभूमि की जय हो,
इस स्वर से गूँजे त्रिभुवन

[गीत समाप्त कर आशाशाह, बहादुर-

सिंह, उदयसिंह, छुंदावत सरदार तथा जयसिंह के सिवा सबका जाना।]

आशाशाह—समस्त सेना चार भागों में बँट चुकी है। पूर्व दिशा निरापद् है, उधर आज युद्ध सामान्य ही होगा। बहादुर-सिंहजी ! आप महाराना उदयसिंह के हाथी के साथ रहकर उनकी और मेवाड़ के झंडे की रक्षा करेंगे।

बहादुरसिंह—पन्ना की भी यही इच्छा थी।

आशाशाह—छुंदावत सरदार ! आप पश्चिमी सेना का संचालन करेंगे।

छुंदावत सरदार—जो आज्ञा।

आशाशाह—जयसिंहजी ! मैं तथा आप उत्तर और दक्षिण की ओर से अपनी-अपनी सेनाओं को बढ़ाते हुए चले आवेंगे। इस प्रकार चारो ओर से बनवीर और उसकी शेष शक्ति को घेर लेना ही हमारा उद्देश्य होगा। चित्तौड़गढ़ के द्वार खुलते क्या देर लगेगी ? चलें, शीघ्रता करें।

["एकलिंग भगवान् की जय !" बोल-कर सबका जाना। नेपथ्य में रण-वाद्य और आवाज़ें। घबराए रणजीत का आना।]

रणजीत—आज प्राण न बचेंगे क्या ? मैंने व्यर्थ ही यह आपदा मोल लेकर बड़ी भूल की। इतने सरदार बनवीर से मुख मोड़कर चल दिए थे, मैं भी उससे विमुख क्यों न हो गया ? वह मेरा क्या कर लेता ? अब भी क्या कुछ हो सकता है ?

[जयसिंह का आना ।]

जयसिंह—हट्-हट्, ओ पापी! तू बनवीर के लिये भी लड़ा न हुआ। इसी तरह विपत्ति के समय तू युद्ध से हाथ खींचकर इस कोने में छिपा है!

रणजीत—छिपा नहीं हूँ, पर आपकी सहायता के लिये, आपकी ओर से लड़ना चाहता हूँ।

जयसिंह—चांडाल! तू कायर ही नहीं, स्वामिद्रोही भी है। मैं तुझे ही खोज रहा था, अपना शस्त्र सँभाल।

रणजीत—किसलिये ?

जयसिंह—तू तो क्षत्रियत्व की दुहाई देता फिरता था। तू ही युद्ध के मैदान में पूछता है, शस्त्र से क्या होगा? मैं केवल तेरा अंत करने के लिये युद्ध-क्षेत्र में आया हूँ।

रणजीत—मैंने तुम्हारा क्या अपराध किया है? यही कि मैं महाराना बनवीर का मित्र हूँ।

जयसिंह—तुम महाराना विक्रम के भी मित्र रह चुके हो, और यदि जीवित ही छोड़ दिए जाओगे, तो महाराना उदयसिंह के भी मित्र बन जाओगे। इस समस्त रक्त-पात की जड़ में तुम हो। शस्त्र सँभालो, अब तुम नहीं बच सकते।

रणजीत—शस्त्र सँभाल लिया जायगा। तू स्वयं सावधान हो। रण के मैदान में उपदेशक बनकर आया है? अभिमानी! चल!

[दोनों का तलवारों से युद्ध करना ।]

[जयसिंह रणजीत को आहत करता है, रणजीत गिर पड़ता है।]

जयसिंह—कायर और चाटुकार, यही तेरा अंत है। [जाना चाहता है।]

रणजीत—ठहरो, ठहरो, मैं इस भेद को अपने साथ नहीं ले जाना चाहता।

जयसिंह—किस भेद को ?

रणजीत—[शीतलसेनी की लिखत देकर] लो, यदि बनवीर युद्ध के बाद जीवित ही रहे, तो यह उसे दे देना।

जयसिंह—यह क्या है ?

रणजीत—मेरा प्रधान मंत्री का पद, जो मुझे कभी न मिला। इसी के लिये मैंने तुम्हारे पिताजी की हत्या की थी।

जयसिंह—मेरे पिताजी के अब तक छिपे हुए वधिक ! अब तुझे क्या दंड दूँ ? जा, तुझे बदला मिल चुका।

रणजीत—[क्षीण स्वर में] क्षमा ! क्ष—मा ! [रणजीत की मृत्यु।]

जयसिंह—मैंने तुझे क्षमा भी किया, जा, चैन से सो। [इसी समय उस पेड़ की शाखा शीतलसेनी के भार से टूट जाती है। शीतलसेनी डाल के साथ ही भूमि पर गिर जाती है।] यह क्या पेड़ की शाखा टूट गई। इसके नीचे तो कोई स्त्री भी दबी पड़ी है। अभागिनी ! मर गई क्या ? [नेपथ्य को देखकर] वह शत्रु की सेना आ पहुँची, चलूँ।

[उदयसिंह का जाना । दोनों ओर से कुछ सैनिकों का लड़ते हुए प्रवेश और प्रस्थान । उदयसिंह और बनवीर का लड़ते हुए प्रवेश और युद्ध करना, तत्पश्चात् बहादुरसिंह का आना ।]

बहादुरसिंह—ठहर-ठहर, मेरे लाला का वध करनेवाले पापी, तेरा अंत मेरे हाथ से हो ।

[उदयसिंह का आना ।]

उदयसिंह—नहीं-नहीं, चाचाजी ! इसे मैं मारूँगा, इसने मेरे भाई चंदन के अतिरिक्त महाराना विक्रम का भी वध किया है ।

[सहसा पन्ना का आना ।]

पन्ना—शांत होओ, अपकार का बदला देना ठीक नहीं है । बनवीर के वध से न विक्रम लौट सकेगा, न चंदन ही जीवित होगा ।

[बनवीर तलवार फेंककर युद्ध बंद कर देता है ।]

बनवीर—अब नहीं, इस तलवार से भी अब कोई आशा नहीं है । तुम सब मिलकर मेरा वध करो ।

पन्ना—नहीं, बनवीर का वध न हो, इसे बंदी करो ।

उदयसिंह—माता की आज्ञा शिरोधार्य है । सैनिक, बनवीर को बंदी करो ।

[दो सैनिक आकर बनवीर को बंदी करते हैं, एक ओर से जयसिंह, दूसरी ओर से चूंडावत सरदार का आना ।]

जयसिंह—महाराना के सभी शत्रु पराजित हो गए।

चूंडावत सरदार—चित्तौड़गढ़ के पथ में कोई भी बाधा नहीं रही।

सब—जय, मेवाड़ के महाराना की जय !

[सबके जाने पर अंत में बहादुरसिंह सुँघनी सूँघते जाता है ।]

दृश्य-परिवर्तन

षष्ठ दृश्य

राजतिलक

[सिंहासन पर उदयसिंह, बहादुरसिंह, आशाशाह, जयसिंह, वृंदावन सरदार आदि यथास्थान स्थित, पन्ना राजमुकुट लिए खड़ी है ।]

पन्ना—यह दिन देखने की बड़ी साध थी। यही वह चिर लालसा का राजमुकुट है। यह तुम्हारे मस्तक पर सुशोभित हो, तुम चित्तौड़ के महाराना हुए उदय!

[पन्ना उदय को राजमुकुट पहनाती है ।]

जयसिंह—तुम्हारी पवित्र बलि से यह दिन इतिहास में अमर हुआ मा!

पन्ना—सरदार जयसिंहजी! जिसे क्षण-भर के लिये भी छाती, गोद और दृष्टि से विलग नहीं किया था, आज मैं अपने उस धन को तुम्हें सौंप दूँगी।

आशाशाह—तुम्हारा यह दान उस बलि से कम नहीं।

पन्ना—जिस प्रकार राव कर्मचंदजी महाराना संग्रामसिंह के दाहने हाथ थे, उसी प्रकार तुम अब उदय के रक्षक रहोगे। आप अपने पिता के रिक्त आसन को पूर्ण करेंगे।

[दो सिपाहियों का बंदी बनवीर को लाना ।]

बहादुरसिंह—कौन, बनवीर !

पन्ना—आओ, आओ, इस राजतिलक के सबसे बड़े हर्ष में मैं तुम्हें मुक्त करती हूँ। प्रहरी ! बनवीर के बंधन खोल दो।

उदयसिंह—मा ! मा ! तुमने यह क्या कहा ?

पन्ना—सच ही कहा है, अब कुछ भी भय नहीं है उदय !

[प्रहरी बनवीर को मुक्त करता है ।
बनवीर पन्ना के चरणों पर गिरता है ।]

बनवीर—तुम क्षमा करो, मा ! मैं तुम्हारा ही अपराधी हूँ।

बहादुरसिंह—पन्ना ! इसने तेरे इकलौते बेटे चंदन का वध किया है, इसको क्षमा ?—

पन्ना—हाँ, हाँ, तुम भी क्षमा करो। उस क्षमा से यह राज-मुकुट का उत्सव मंगलमय हो जायगा ।

बनवीर—चिंता न करो, उदय! मैं इसी क्षण चित्तौड़ का त्याग कर मेवाड़ ही नहीं, राजस्थान से भी दूर चला जाऊँगा। तुम्हारे सुख में मेरी छाया भी न पड़ेगी। बिदा ! [जाना चाहता है ।]

जयसिंह—ठहरो बनवीर ! रणजीत मरते समय तुम्हें देने को कुछ दे गया था। लो [शीतलसेनी की लिखत देता है ।]

[बनवीर का जाना ।]

बहादुरसिंह—हमारा यह आनंद-उत्सव नृत्य और गीत से खिल उठे । [सुँघनी सूँघता है ।]

[बालाएँ आकर नृत्य-गीत आरंभ करती हैं।]

मालकोस—तीन ताल

चिरजीवी राज रहे राजन् !

[१]

हो तुम पालक प्रेम-प्रीति के,
हो संचालक न्याय-नीति के,
घालक हो तुम पाप-भीति के,
बलि है तुम पर यह जीवन।

[२]

जग में छावे कीर्ति तुम्हारी,
शत्रु-हीन हो वसुधा सारी,
घर-घर गुण गावें नर-नारी,
हों प्रसन्न स्वर्ग के देवगण।

[३]

प्रजा सुखी होवे सुवेश में,
फैले कविता-कला देश में,
सज्जन पड़ें न कभी क्लेश में,
निर्मल 'औ' निर्भय होवे मन।

[बालाओं के स्थिर नाट्य पर—]

यवनिका

बालाएँ—चिरञ्जीवी राज रहे राजन् !

[पृष्ठ १२४]